एहा शुणि सनमत कले बइदेही ।
गगन मार्गरे रथ देलेक चळाइ ।। ७० ।।
किष्किन्ध्या कटक मध्यु रथ चळिगला ।
लंकापुर सळखरे गगने मिळिला ।। ७१ ।।
जानकी बोइले शुण हे बीर लक्ष्मण ।
दण्डे रहि देखिबाक ए लंकाभुवन ।। ७२ ।।
लक्ष्मण बोइले जिबा बहुदूर पथ ।
तेणे चाहिँ रहिथिबे देब रघुनाथ ।। ७३ ।।
एथु अनन्तरे लंका पार होइगले ।
बिलंकापुरकु रथ चळाइण देले ।। ७४ ।।
तृतीय प्रहर होइ अछि दिनकर ।
बिलंका नगरे पहुँचिला रहुबर ।। ७५ ।।
प्रचण्ड पर्वते भालुछन्ति रघुनाथ ।
गगन मार्गरे जाइँ मिळिलाक रथ ।। ७६ ।।
बिमानरे थाइ चाहिँ देले बइदेही ।
काण्ड कोदण्ड धरिण बिजे रघुसाइँ ।। ७७ ।।
देखिण जानकीदेवी हरष होइले ।
विमान नेइण हनु पर्वते थोइले ।। ७८ ।।
रथ देखि रामचन्द्र हरष होइले ।
रथ परे बसिछन्ति सीतांकु देखिले ।। ७९ ।।

अपनी सम्मति दे दी तथा आकाश-मार्ग से रथ को चला दिया । ७० किष्किन्धा दुर्ग के बीच से रथ चला गया । आकाश में लंकानगर के निकट पहुँच गया । ७१ जानकी ने कहा, हे पराक्रमी लक्ष्मण ! सुनो । एक दण्ड रुककर यह लंकानगर भी देखा जाय । ७२ लक्ष्मण ने कहा, चलिए, रास्ता बहुत लम्बा है । वहाँ पर प्रभु रघुनाथ जी भी बाट देख रहे होंगे । इसके बाद लंका पार हो गया । बिलंकापुर की ओर रथ चला दिया गया । ७३-७४ दिन का तीसरा प्रहर हो आया था । श्रेष्ठ रथ बिलंकानगर पहुँच गया । ७५ रघुनाथ जी प्रचण्ड पर्वत पर विचारमग्न थे । तभी आकाश-मार्ग से रथ वहाँ जा पहुँचा । ७६ विमान से ही वैदेही ने दृष्टिपात किया । रघुनाथ जी कोदण्ड तथा बाण लेकर विराजमान थे । ७७ यह देखकर देवी जानकी प्रसन्न हो गयीं । हनुमान ने विमान को ले जाकर पर्वत पर रख दिया । ७८ रथ को देखकर रामचन्द्र

जानकी देवींकु देखि कोदण्ड धारण ।
लज्जा पाइ बसिलेक पोतिण बदन ।। ८० ।।
रथर उपरु बेगे सती उतुरिले ।
हस हस होइ राम पादरे पड़िले ।। ८१ ।।
ओळगि होइले सती जोड़ि बेनिकर ।
लक्ष्मण पड़िले रघुनाथंक पयर ।। ८२ ।।
लक्ष्मणंकु पचारन्ति से कोदण्ड साइँ ।
अजोध्या कुशळ मोते कहनिरे भाइ ।। ८३ ।।
एहा शुणि सउमित्री जोड़ि बेनि कर ।
तुम्भ बिहुने देव अजोध्या अन्धकार ।। ८४ ।।
समस्त कुशळ अटे प्रभु रघुनान ।
तुम्भ बिहूने बिकळ होन्ति प्रजागण ।। ८५ ।।
शुणिण जानकीदेवी बोइले मो नाथ ।
केड़े माल जोद्धा अटे पापिष्ठ दइत्य ।। ८६ ।।
एते कष्ट देला से पामर दैत्य काहिँ ।
जमभुवनकु आजि पठाइबि मुहिँ ।। ८७ ।।
एहा शुणि रघुनाथ हरष होइले ।
जानकींकि भुजधरि कोळे बसाइले ।। ८८ ।।

भी प्रसन्न हो गये । उन्होंने रथारूढ़ सीता को देखा । ७९ उन्हें देखकर कोदण्डधारी श्रीराम ने लज्जित होकर अपना मुख झुका लिया । ८० रथ के ऊपर से शीघ्र ही सती उतर पड़ीं । वह मुस्कराते हुए श्रीराम के चरणों में गिर पड़ीं । ८१ सती सीता ने दोनों हाथ जोड़कर श्रीराम को प्रणाम किया । लक्ष्मण ने भी श्रीराम के चरण छुए । ८२ कोदण्ड के स्वामी ने लक्ष्मण से पूछा, अरे भाई ! अयोध्या के कुशल समाचार मुझसे क्यों नहीं कह रहे हो । ८३ यह सुनकर लक्ष्मण ने दोनों हाथ जोड़कर कहा, हे देव ! आपके बिना अयोध्या अन्धकारपूर्ण है । ८४ हे प्रभु रघुनाथ ! सब कुशल है । परन्तु आपके बिना प्रजागण व्याकुल हो रहा है । ८५ यह सुनकर देवी जानकी ने कहा कि पापी दैत्य कितना मल्ल योद्धा है ? उस नीच दैत्य ने इतना कष्ट क्यों दिया ? आज मैं उसे यमालय में पहुँचा दूँगी । ८६-८७ यह सुनकर रघुनाथ जी प्रसन्न हो गये । उन्होंने जानकी का हाथ पकड़कर उन्हें गोद में बैठा लिया । ८८ सीता के

जानकींकि मुख चाहिँ बोलन्ति श्रीराम ।
अजोध्यारु आसिबार हेला केते दिन ।। ८९ ।।
लक्ष्मण बोइले देव मकर मासरे ।
अजोध्या नगर छाड़ि अइँलु शून्यरे ।। ९० ।।
ए आषाढ़ मासकु जे षड़मास हेला ।
बिलंकाभुवने रथ प्रवेश होइला ।। ९१ ।।
एहा शुणि रघुनाथ हरष होइले ।
जानकींकु घेनि देव समुद्रे पशिले ।। ९२ ।।
स्नान कले जाइँ देव कोदण्ड धारण ।
तर्पण सारिले सीता हस्तकु धरिण ।। ९३ ।।
पर्वत उपरे बिजे कले रघुबीर ।
फळमूळ सीता-राम करन्ति आहार ।। ९४ ।।

राम ओ सीतांकर सहस्रशिरा रावण विषय कथोपकथन, सहस्रशिरा रावण सहित हनुमान लक्ष्मण ओ रामचन्द्रंकर जुद्ध

एथु अनन्तरे शुण देवी हैमवती ।
सूर्य अस्त हेला जहुँ होइलाक राति ।। १ ।।
रथरे शोइले बइदेही रघुपति ।
जुद्धकथा सबु राम सीतांकु कहन्ति ।। २ ।।

मुख को देखकर श्रीराम ने कहा कि अयोध्या से आये कितने दिन व्यतीत हो गये । ८९ लक्ष्मण ने कहा, हे देव ! मकर के महीने में अयोध्या को त्यागकर आकाश में चलकर आये थे । ९० इस आषाढ़ मास से छः माह होते ही रथ बिलंकानगर में प्रविष्ट हुआ । ९१ यह सुनकर रघुनाथ जी प्रसन्न हो गये और जानकी को लेकर समुद्र में उतर गये । ९२ कोदण्डधारी प्रभु राम ने जाकर स्नान किया और सीता का हाथ पकड़कर तर्पण समाप्त किया । ९३ फिर पराक्रमी राघव पर्वत के ऊपर पहुँच गये तथा जानकी के समेत श्रीराम जी फल-मूल खाने लगे । ९४

सहस्रशिरा रावण के विषय में श्रीराम और सीता का कथोपकथन तथा सहस्र-शिरा रावण के साथ हनुमान, लक्ष्मण तथा श्रीराम का युद्ध

हे हिमवन्तकुमारी ! सुनो । इसके पश्चात् सूर्यास्त होने पर रात्रि हो गयी । १ रथ के ऊपर श्री रघुनन्दन तथा वैदेही शयन करने लगे ।

हनुमन्त चित्रसेन लक्ष्मण शोइले ।
से दिन सुखरे तहिँ रजनी बंचिले ।। ३ ।।
हनुकु बोइले प्रभु रघुकुळ वीर ।
जुद्धकु त न अइला प्रतापी असुर ।। ४ ।।
भय करि पशि अछि कटक भितरे ।
आगे द्वन्द्व कर तुहि असुर संगरे ।। ५ ।।
शुणि हनुमन्त बीर आनन्द होइला ।
श्रीराम सीतांक पादे जाइँ ओळगिला ।। ६ ।।
बिलंकाकु बहारिला पवनकुमार ।
जाअ बोलि आज्ञा देले प्रभु रघुबीर ।। ७ ।।
बिलंकाकु चळिगला बीर हनुमान ।
उत्तर दुआर पढ़े पशिला बहन ।। ८ ।।
घोर गरजन कला पवनर बळा ।
आरेरे असुर बोलि दैत्यकु डाकिला ।। ९ ।।
नगरे रहिलु किम्पा निश्चिन्त होइण ।
केउँ दिनरे पापिष्ठ पाइबु मरण ।। १० ।।
उठि आसि राम तुले कर तु समर ।
निश्चे क्षत्रीपण आजि बूझिबा तोहर ।। ११ ।।

श्रीराम सीता से सारी युद्ध-कथाएँ कहने लगे । २ हनुमान, लक्ष्मण तथा चित्रसेन भी सो गये । वहीं पर उस दिन सुखपूर्वक रात्रि व्यतीत हो गयी । ३ रघुकुल में पराक्रमी प्रभु राम ने हनुमान से कहा कि प्रतापी दैत्य तो युद्ध करने को नहीं आया । ४ भयभीत हो करके वह दुर्ग के भीतर छिपा है । तुम्हीं पहले असुर के साथ जाकर युद्ध करो । ५ यह सुनकर पराक्रमी हनुमान जी प्रसन्न हो गये । उन्होंने जाकर श्रीराम तथा जानकी जी के चरणों में प्रणाम किया । ६ पवनकुमार हनुमान बिलंका के लिए निकल पड़े । रघुकुल में वीर प्रभु राम ने उन्हें जाने की आज्ञा दी । ७ पराक्रमी हनुमान बिलंका चले गये तथा वह उत्तरी द्वार से शीघ्रता से दुर्ग में प्रविष्ट हुए । ८ पवनतनय ने घनघोर गर्जन करते हुए अरे रे दैत्य ! आ, कहकर उसे ललकारा । ९ तू निश्चिन्त होकर नगर में कैसे पड़ा है ? अरे पापी ! किस दिन तू मृत्यु का वरण करेगा ? १० उठ और आकर राम के सामने युद्ध कर । आज निश्चय ही तेरा योद्धापन समझ लेंगे । ११

एहा शुणि दैत्यपति कोपेण गर्जइ ।
हनुमन्त मुख चाहिं असुर बोलइ ॥ १२ ॥
आरेरे बानर तोर केवण साहस ।
अकारणे ए अजय गढ़ कलु नाश ॥ १३ ॥
ज्ञाति बन्धु भाइ वर्ग सोदर नाशिलु ।
पुत्र नाति सहितरे सकळ माइलु ॥ १४ ॥
एबे निश्चे मोर हस्ते जिबु जमपुर ।
मोहर हस्तरे निश्चे मरण तुम्भर ॥ १५ ॥
कहुँ कहुँ धाइँ आसे सेहि दैत्य साइँ ।
हनुपरे बज्र बिधा माइलाक नेइ ॥ १६ ॥
बिधाघाते हनुमान पड़िला भुमिरे ।
राम राम सुमरिण उठि गगनरे ॥ १७ ॥
तहुँ आसि असुरकु आकर्षिला पुणि ।
निठाइण बज्रबिधा मारे बीरमणि ॥ १८ ॥
प्रतापी असुर पाइ सेहि बिधाघात ।
मूर्छा होइ भूमितळे पड़िला दइत्य ॥ १९ ॥
घोर तर रड़िगोटा छाड़िला से काळे ।
भयरे पृथ्वीदेवी पशिले पाताळे ॥ २० ॥

यह सुनकर दैत्यराज क्रुद्ध होकर गर्जन करने लगा तथा हनुमान के मुख की ओर देखकर असुर बोला । १२ अरे रे वानर ! तेरे कितना साहस है ? अकारण ही तूने इस दुर्जेय गढ़ को नष्ट कर डाला । १३ जाति-बिरादरी के भाई-बन्धुगण, सहोदर आदि को नष्ट कर डाला तथा पुत्र-नातियों सहित सबको मार डाला । १४ अब निश्चित रूप से मेरे हाथों यमपुरी को प्रस्थान करोगे । मेरे हाथों से तुम्हारी मृत्यु निश्चित है । १५ बातों ही बातों में वह दैत्यराज दौड़कर आ गया तथा उसने हनुमान के ऊपर वज्र-मुष्टि से प्रहार किया । १६ मुष्टिका के आघात से हनुमान पृथ्वी पर गिर पड़े । फिर राम-राम का स्मरण करते हुए आकाश में उड़ गए । १७ फिर वहीं से झपटकर उन्होंने असुर को खींच लिया और बीरमणि बजरंगी ने ताककर वज्रमुष्टि जड़ दी । १८ प्रतापी दैत्य उस मुष्टिकाघात से मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा । १९ उसने उस समय भीषण चीत्कार छोड़ी जिससे भयभीत होकर पृथ्वी पाताल में धसक गयी । २० वह भीषण

प्रचण्ड गिरिकि रड़ि शुभे घन घन ।
श्रीराम बोइले आहे शुण चित्रसेन ।। २१ ।।
असुर संगरे जुद्ध करे हनुमान ।
रथ सजकर मुहि जिबइँ बहन ।। २२ ।।
एका युद्ध करुअछि अंजना तनय ।
दुर्दान्त दानव अटे से बिलंकाराय ।। २३ ।।
एहा शुणि सउमित्री जोड़ि बेनिकर ।
बोइले भो देब मुहिँ देखिबि असुर ।। २४ ।।
केड़े बड़माल जोद्धा अटइ दइत्य ।
शुणिण सानन्द हेले प्रभु रघुनाथ ।। २५ ।।
लक्ष्मणकु बोइले तु जेबे जिबु बाबु ।
मायावी दइत्य जुद्ध जाणि न पारिबु ।। २६ ।।
बळे महाबळीयार अटइ असुर ।
बाहुबळे करइ से अनेक समर ।। २७ ।।
सम्भाळि ता संगे जुद्ध करिबु लक्ष्मण ।
तोते एका पेशिबाकु न बळे मो मन ।। २८ ।।
एहा शुणि सउमित्री पड़िले पादरे ।
रथरे बसिले धनुशर धरि करे ।। २९ ।।
चित्रसेन बीररथ शुन्ये नेला बाहि ।
निमिषके दैत्यपुरे पशिले झसाइ ।। ३० ।।

भीतकार प्रचण्ड पर्वत पर सुनायी पड़ी । श्रीराम ने कहा, हे चित्रसेन ! सुनो । २१ हनुमान दैत्य के साथ युद्ध कर रहे हैं । रथ सज्जित करो । मुझे शीघ्र ही जाना है । २२ अंजनानन्दन अकेले ही युद्ध कर रहे हैं । वह बिलंकेश दुर्दान्त दानव है । २३ यह सुनकर सुमित्राकुमार लक्ष्मण ने दोनों हाथ जोड़कर कहा, हे देव ! मैं असुर को देखना चाहता हूँ । २४ दैत्य कितना बड़ा मल्लवीर है ? यह सुनकर प्रभु रघुनाथ जी प्रसन्न हो गये । २५ उन्होंने लक्ष्मण से कहा, हे भाई ! यदि तुम जाओगे तो उस दैत्य के मायावी युद्ध को समझ नहीं सकोगे । २६ बल में वह दैत्य महान बलशाली है । अपने बाहुबल से वह अनेक प्रकार से युद्ध करता है । २७ हे लक्ष्मण ! तुम उसके साथ सम्हालकर युद्ध करना । तुम्हें अकेले भेजने को मेरा मन नहीं करता । २८ यह सुनकर लक्ष्मण चरणों में गिर गये । फिर धनुष-बाण हाथों में लेकर रथ पर आरूढ़ हो गये । २९ पराक्रमी

रथ परे थाइ बीर सुमित्रानन्दन ।
देखिले बिलंकापुर अति शोभावन ।। ३१ ।।
लंकापुर ठारु शोभा दिशे दशगुण ।
कटक जगती दिशे जेसने सुवर्ण ।। ३२ ।।
दुइ लक्ष जूण अटे ताहार विस्तार ।
लक्षे हात उच्च पुणि अटइ प्राचीर ।। ३३ ।।
धन्य ए पुरकु नाशकल रघुनान ।
बहुत प्रशंसा कले सुमित्रानन्दन ।। ३४ ।।
एमन्त मनरे भाळि पशिले भितरे ।
देखिलेक हनु जूझे दैत्य संगतरे ।। ३५ ।।
बिधा मरामरि बेनि बीर हेउछन्ति ।
गड़न्ति पड़न्ति पुणि गर्जन्ति तर्जन्ति ।। ३६ ।।
एहा देखि सउमित्री हेले अग्रसर ।
कोदण्ड गुणरे हूळ चढ़ाइले बीर ।। ३७ ।।
लक्षे वाण तूणु काढ़ि गुणे बसाइले ।
दैत्य उपरकु कोपे निठाइ बिन्धिले ।। ३८ ।।
असुर उपरे जाइँ पड़िला से बाण ।
घाए घुमाइला सेइ लंकार रावण ।। ३९ ।।

चित्रसेन रथ को आकाश में चलाकर ले गया तथा पलमात्र में ही झपटकर दैत्यपुर में घुस गया । ३० रथ से ही पराक्रमी सुमित्राकुमार ने अत्यन्त सुहावनी बिलंकापुरी को देखा । ३१ लंकापुरी से भी उसकी शोभा दसगुनी अधिक थी । दुर्ग की जगती स्वर्ण-जैसी दिखायी दे रही थी । ३२ उसका विस्तार दो लाख योजन का था । उसकी प्राचीर एक लाख हाथ ऊँची थी । ३३ यह नगर धन्य है, जिसे श्रीरघुराज ने नष्ट किया । सुमित्राकुमार ने उसकी बहुत प्रशंसा की । ३४ इस प्रकार मन में विचार करते हुए भीतर घुस गये । उन्होंने हनुमान को दैत्य के साथ युद्ध करते हुए देखा । ३५ दोनों योद्धा एक-दूसरे को मुष्टि प्रहार कर रहे थे । वह दोनों लड़खड़ाते गिरते गर्जन तथा तर्जन कर रहे थे । ३६ यह देखकर लक्ष्मण आगे बढ़े । पराक्रमी लक्ष्मण ने कोदण्ड (धनुष) पर प्रत्यञ्चा चढ़ायी तथा तूणीर से एक लाख बाण निकाल कर प्रत्यञ्चा पर सन्धान करके कुपित होकर लक्ष्य साधकर दैत्य के ऊपर छोड़ दिये । ३७-३८ वह बाण असुर के ऊपर जा पड़ा जिससे वह लंका का रावण चक्कर खाकर मूर्च्छित हो गया । ३९ चेतना लौटने पर दैत्य ने निरीक्षण करके देखा तथा वह

चेतना पाइण दैत्य निरीक्षि चाहिँला ।
नुहन्ति श्रीराम बोलि दइत्य जाणिला ॥ ४० ॥
पचारिला धनुर्धर काहिँ तोर घर ।
वज्रसम लगिलाक ए तोहर शर ॥ ४१ ॥
कह काहा पुत्र तुहि केउँ राज्ये घर ।
तु किम्पाइँ मोर संगे करुछु समर ॥ ४२ ॥
लक्ष्मण बोइले शुण बिलंका ईश्वर ।
तोर बंश नाशकले जेउँ धनुर्धर ॥ ४३ ॥
से प्रभुंक सान भाइ मो नाम लक्ष्मण ।
आजि एहि बाणे तोर घेनिबि पराण ॥ ४४ ॥
दइत बोइला तुम्भठारे दया नाहिँ ।
अकारणे मोर पुर भांगिल किम्पाइँ ॥ ४५ ॥
अवश्य श्रीरामंकु मुँ मारिबि समरे ।
कीरति रखिबि मूंहिँ जुग जुगान्तरे ॥ ४६ ॥
एहा शुणि सउमित्री करे धनुधरि ।
अयुत सहस्र बाण बिन्धिले ओटारि ॥ ४७ ॥
असुर उपरे पड़ि बाण भांगि गला ।
एहा देखि कोप भरे असुर धाइँला ॥ ४८ ॥
लक्ष्मणंक विमानकु धइलाक जाइ ।
जेते बाण मारुछन्ति श्रीरामंक भाइ ॥ ४९ ॥

समझ गया कि यह श्रीराम नहीं है । ४० उसने पूछा, हे धनुर्धर ! तुम्हारा घर कहाँ है ? तुम्हारा यह बाण वज्र के समान लगा । ४१ बोल तू किसका पुत्र है और तेरा घर किस राज्य में है ? तू किस कारण से मुझसे युद्ध कर रहा है ? ४२ लक्ष्मण ने कहा कि हे बिलंकेश्वर ! सुन । जिस धनुर्धर ने तेरे वंश का संहार किया है उन्हीं प्रभु का मैं छोटा भाई हूँ । मेरा नाम लक्ष्मण है । आज इसी बाण से मैं तेरे प्राण ले लूंगा । ४३-४४ दैत्य ने कहा कि तुम्हारे पास दया नहीं है । बिना कारण के हमारे नगर को किसलिए नष्ट कर दिया ? ४५ मैं युद्ध में श्रीराम का वध अवश्य करूँगा तथा मैं युग-युगान्तर तक कीर्ति की स्थापना करूँगा । ४६ यह सुनकर लक्ष्मण ने हाथों में धनुष लेकर एक हजार अयुत बाण तानकर छोड़ दिये । ४७ असुर के ऊपर गिरकर बाण टूट गए । यह देखकर दैत्य कुपित होकर दौड़ा । ४८ उसने जाकर लक्ष्मण के विमान को पकड़ लिया । श्रीराम

असुर देहरे पड़ि सबु हुए चूर ।
देखिण आश्चर्य हेले सुमित्राकुमर ।। ५० ।।
दुइ सहस्र हस्तरे विमान धइला ।
लक्ष्मणंक रहुबर चळि न पारिला ।। ५१ ।।
हनुमन्त जाइ बज्र बिधाए माइला ।
डेई जाइ असुरर कान्धरे बसिला ।। ५२ ।।
सहस्रेक मुण्ड धरि झिंकि हनुमान ।
पदाघाते कला तार मुकुट मर्दन ।। ५३ ।।
रथ छाड़ि दैत्य बेगे हनुकु धरइ ।
गळगाजि बिधाए प्रहार कला नेइ ।। ५४ ।।
विधाघाते हनुमन्त भुमिरे पड़िला ।
हनुमन्त राम राम सुमरि उठिला ।। ५५ ।।
चेतना पाइण क्रोधे दैत्यकु धइला ।
गोड़े गोड़ हाते हात छन्दि पकाइला ।। ५६ ।।
बेनि बीर पुणि तहिँ युद्ध आरम्भिले ।
धराधरि होइ भूमि तळरे पड़िले ।। ५७ ।।
घन घन गरजन्ति उच्चे रड़िद्यन्ति ।
महा कोपे बेनि बीरे जुद्ध करुछन्ति ।। ५८ ।।

के अनुज जितने बाणों से प्रहार कर रहे थे, वह सब दैत्य के शरीर पर लगकर चूर-चूर हो जाते थे। ऐसा देखकर सुमित्रानन्दन आश्चर्यचकित हो गये। ४९-५० उसने दो हजार भुजाओं से विमान पकड़ लिया। लक्ष्मण का श्रेष्ठ रथ चल नहीं सका। ५१ हनुमान ने जाकर बज्र-मुष्टिका से प्रहार कर दिया और कूदकर असुर के कन्धे पर जा बैठे। ५२ हनुमान ने उसके हजार शिरों को पकड़कर झकझोर दिया। पैरों के आघात से उसके मुकुट कुचल दिये। ५३ दैत्य ने रथ को छोड़कर वेग से हनुमान को पकड़ा और हुंकार भरते हुए उन पर मुष्टिका से प्रहार किया। ५४ मुष्टिकाघात से हनुमन्तलाल पृथ्वी पर गिर पड़े। फिर राम-राम स्मरण करते हुए चेतना प्राप्त करके कुपित होकर उन्होंने दैत्य को पकड़ लिया और उसके पैरों को पैरों से और हाथों को हाथों से फँसा लिया। ५५-५६ फिर दोनों योद्धाओं ने वहाँ युद्ध प्रारम्भ कर दिया तथा धर-पकड़ करते-करते पृथ्वी पर गिर पड़े। ५७ घनघोर गर्जन के साथ भयंकर चीत्कार करते हुए महान क्रोध में भरे हुए दोनों वीर युद्ध कर

पाद लागि घर द्वार हेउ अछि चूर।
बिलंकानगर सबु कम्पे थर हर॥ ५९ ॥
एहा देखि सउमित्री अपसरि गले।
गगनमार्गरे निज रथकु रखिले॥ ६० ॥
हस्ती संगे हस्ती जेन्हे करइ समर।
तेसने समर करुछन्ति बेनि बीर॥ ६१ ॥
कि अबा केशरी संगे जूझन्ति केशरी।
बाहा स्फोट मारि दुहेँ होन्ति मरामरि॥ ६२ ॥
स्वर्गपुरे देवगणे भयरे कम्पिले।
धन्य धन्य हनुमान बोलि प्रशंसिले॥ ६३ ॥
शून्यमार्गे थाइ धनु धरिण लक्ष्मण।
कोपेन बिन्धिले ज्वाळावळी नामे बाण॥ ६४ ॥
असुर उपरे शर पड़िलाक जाइ।
देखिण धाइँला कोपे से बिलंका साइँ॥ ६५ ॥
सहस्र भुजे सहस्र मुद्गर धइला।
लक्ष्मणंक रथ परे नेइ कचाड़िला॥ ६६ ॥
एहा देखि अपसरि गले बीर मणि।
बावल बाणरे देले मुद्गरकु हाणि॥ ६७ ॥

रहे थे। ५८ पैरों के लगने से घर-द्वार चूर हो रहे थे। सम्पूर्ण बिलंका-नगरी थर-थर कांप रही थी। ५९ यह देखकर लक्ष्मण हट गये और उन्होंने अपना रथ (ले जाकर) आकाश-मार्ग में खड़ा किया। ६० जैसे हाथी के साथ हाथी युद्ध करता है वैसे ही दोनों योद्धा संग्राम कर रहे थे। ६१ अथवा जैसे सिंह के साथ सिंह भिड़ जाता है वैसे ही दोनों भुजाएँ फड़काकर आपस में मार-धाड़ कर रहे थे। ६२ स्वर्गलोक में देवता लोग भयभीत होकर काँपने लगे तथा हनुमान तुम धन्य हो! धन्य हो! कहकर उनकी प्रशंसा करने लगे। ६३ आकाश से लक्ष्मण ने धनुष उठा कर कुपित होकर ज्वालावली नामक बाण छोड़ दिया। ६४ बाण असुर के ऊपर जा गिरा। यह देख वह बिलंकेश कुपित होकर दौड़ा। ६५ उसने हजार भुजाओं में हजार मुग्दर लेकर लक्ष्मण के रथ पर पटक दिये। ६६ यह देखकर वीर शिरोमणि लक्ष्मण हट गये तथा बावेल नामक बाण से मुग्दरों को काट गिराया। ६७ मुग्दरों के बिना दैत्य निःशस्त्र हो

मुद्गर बिहूने दैत्य निशस्त्र होइला ।
पुणि सहस्रेक पाटि विस्तारि धाइँला ।। ६८ ।।
रथ उपरकु दैत्य पड़िलाक डेइँ ।
विमानकु घेनि पळाइले रामभाइ ।। ६९ ।।
गगनमार्गरे रखिलेक रहुबर ।
महाकोपे बिन्धिलेक परशु मुद्गर ।। ७० ।।
असुर उपरे बाण पड़ि हेला चूर ।
दुर्वार समर कला प्रतापी असुर ।। ७१ ।।
पुनरपि लक्षे बाण बिन्धिले लक्ष्मण ।
दइत्यर अंगे पड़ि सबु हेला चूर्ण ।। ७२ ।।
देवतामानंकु त्रास लागे गुरुतर ।
घोर युद्ध आरम्भिले पवनकुमर ।। ७३ ।।
हनुमन्त संगे घेनि आरम्भिला रण ।
गगनर देवगण हेले कम्पमान ।। ७४ ।।
युद्ध हेला दुइ दिन अढ़ाइ प्रहर ।
केहि न घुंचन्ति जुझुछन्ति बेनि बीर ।। ७५ ।।
पादगामी होइ तहिँ जुझिले लक्ष्मण ।
चित्रसेनकु बोइले घेनिजा विमान ।। ७६ ।।
जानकींकु सम्हाळिबु पर्वत उपर ।
श्रीराम नइले न मरिब ए असुर ।। ७७ ।।

गया । फिर वह हजार मुखों को फैलाकर दौड़ा । ६८ दैत्य रथ के ऊपर झपट पड़ा । रामानुज लक्ष्मण विमान को लेकर भाग खड़े हुए । ६९ श्रेष्ठ रथ को उन्होंने आकाश-मार्ग में रोक लिया तथा अत्यन्त क्रुद्ध होकर परशु और मुग्दर से प्रहार किया । ७० असुर के ऊपर गिरकर बाण चूर हो गये । प्रतापी दैत्य ने बड़ा भयंकर युद्ध किया । ७१ फिर लक्ष्मण ने एक लाख बाण छोड़े ! वे सभी दैत्य के शरीर पर लगकर चूर-चूर हो गये । ७२ देवताओं को बड़ा डर लग रहा था, तभी पवननन्दन हनुमान ने घोर युद्ध प्रारम्भ कर दिया । ७३ उसने हनुमान के साथ युद्ध प्रारम्भ कर दिया । आकाश में देवता लोग काँपने लगे । ७४ दो दिन ढाई प्रहर पर्यन्त युद्ध चलता रहा । दोनों ही वीर भिड़े पड़े थे । उनमें से कोई भी पीछे नहीं हट रहा था । ७५ तब लक्ष्मण ने पैदल ही युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया । उन्होंने चित्रसेन से कहा कि विमान ले जाओ । ७६ जानकी

एहा शुणि चित्रसेन बेगे चळिगला ।
देवरथ घेनि राम आगरे मिळिला ॥ ७८ ॥
पादे पड़ि जणाइला बीर चित्रसेन ।
घोर जुद्ध करुछन्ति सुमित्रानन्दन ॥ ७९ ॥
तिनि दिन हेला क्षणे नाहिँ ता विश्राम ।
जुद्धे असकत हेले पवननन्दन ॥ ८० ॥
एहा शुणि रघुनाथ चमत्कार हेले ।
जानकींकु चित्रसेन सम्हाळ बोइले ॥ ८१ ॥
देखइ असुर केन्हे करइ समर ।
एते बोलि धाइँलेक प्रभु रघुबीर ॥ ८२ ॥
जानकी बोइले केहु मारि न पारिले ।
बळात्कार जुद्ध न करिब तार तुले ॥ ८३ ॥
जानकींक वाक्य शुणि कहे बीरमणि ।
एहि ठारे थाअ तुम्भे जनकनन्दिनी ॥ ८४ ॥
आजि निश्चे मारिबइँ बिलंका राजन ।
आउ अन्य किछि कथा मनरे न घेन ॥ ८५ ॥
धाइँ प्रवेशिले करे धरि धनु शर ।
दैत्य उपरकु बिन्धिलेक लक्षे शर ॥ ८६ ॥

को पर्वत पर सम्हालना । श्रीराम के बिना आये यह दैत्य नहीं मरेगा । ७७ यह सुनकर चित्रसेन वेग से चला गया तथा देवरथ लेकर श्रीराम के समक्ष जा पहुँचा । ७८ पराक्रमी चित्रसेन ने चरण छूकर निवेदन किया कि सुमित्राकुमार लक्ष्मण भीषण युद्ध कर रहे हैं । ७९ तीन दिन हुए उसे एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं मिला तथा युद्ध में पवनकुमार हनुमान अशक्त हो गये हैं । ८० यह सुनकर रघुनाथ जी अचम्भे में पड़ गये । वह बोले, हे चित्रसेन ! जानकी को सम्हालो । ८१ देखता हूँ असुर कैसा युद्ध कर रहा है ? इतना कहकर पराक्रमी प्रभु राघव दौड़ पड़े । ८२ जानकी ने कहा कि कोई भी तो उसे मार नहीं पाया । जबरदस्ती उसके विरुद्ध लड़ाई न करें । ८३ जानकी की बात को सुनकर वीर श्रेष्ठ राम ने कहा, हे जनककुमारी ! तुम यहीं पर रहो । ८४ आज निश्चय ही बिलंकेश्वर का वध कर डालूँगा । तुम अन्य कोई बात अपने मन में मत सोचो । ८५ वह हाथ में धनुष-बाण लेकर दौड़कर घुस गये और उन्होंने दैत्य के ऊपर एक लाख बाण छोड़ दिये । ८६ फिर

पुणि तीनि लक्ष बाण बिन्धिले श्रीराम ।
बाणरे अदृश्य हेला सूर्जङ्क किरण ।। ८७ ।।
मेदिनी दिशिला बाणघाते अन्धकार ।
असुर उपरे पड़ि सबु हेला चूर ।। ८८ ।।
बावल बाण जे पुणि बिन्धिले श्रीराम ।
पाशुपत बज्र बाण बिन्धिले लक्ष्मण ।। ८९ ।।
पर्वत गोटाए हनुमन्त उपाड़िला ।
दइत उपरे से गिरिकि कचाड़िला ।। ९० ।।
असुर उपरे पड़ि गिरि हेला चूर ।
शर सबु भांगि जाइ पड़िला भुमिर ।। ९१ ।।
एहा देखि सउमित्री चमत्कार हेले ।
एगार सहस्त्र बाण कोपेण बिन्धिले ।। ९२ ।।
तहिँ पछे तिनि लक्ष बाण प्रहारिले ।
असुर अंगरे पड़ि उपुड़ि पड़िले ।। ९३ ।।
दइत्य उपरे पड़ि सबु हेला चूर ।
देखि चमत्कार हेले सुमित्राकुमर ।। ९४ ।।
श्रीराम बोइले बाबु धनु धर आण्टे ।
दैत्यर मरण काळ होइला निकटे ।। ९५ ।।

श्रीराम ने तीन लाख बाण छोड़े जिसके कारण सूर्य की किरणें भी छिप गयीं । ८७ बाणों के आघात से पृथ्वी अन्धकारपूर्ण हो गई । वह सब बाण असुर के ऊपर गिरकर चूर हो गये । ८८ फिर श्रीराम ने बावल नामक बाण छोड़ दिया । लक्ष्मण ने पाशुपत वज्र बाण छोड़ दिया । ८९ हनुमान ने एक पर्वत उखाड़ कर दैत्य के ऊपर दे पटका । ९० राक्षस के ऊपर गिरकर पर्वत चूर-चूर हो गया । सभी बाण टूटकर पृथ्वी पर जा गिरे । ९१ यह देख सुमित्रानन्दन आश्चर्य में पड़ गये तथा उन्होंने ग्यारह हजार बाण क्रुद्ध होकर छोड़ दिये । ९२ उसके बाद तीन लाख बाणों से प्रहार किया जो असुर की देह पर लगते ही उखड़ कर गिर पड़े । ९३ दैत्य के ऊपर गिरकर सब चूर-चूर हो गये । यह देखकर सुमित्रानन्दन को आश्चर्य हुआ । ९४ श्रीराम ने कहा कि भाई ! धनुष को दृढ़ता से धारण करो । दैत्य के मृत्यु का समय निकट आ गया है । ९५ यह सुनकर लक्ष्मण ने वज्रबाण छोड़ दिया, परन्तु वह बाण भी

शुणिण लक्ष्मण बिन्धिलेक बज्रबाण ।
असुर उपरे बाजि बाण हेला चूर्ण ।। ९६ ।।
ब्रह्मशक्ति बिन्धिलेक प्रभु रघुबीर ।
ब्रह्मशूळ तार पछे कलेक प्रहार ।। ९७ ।।
शक्ति भल्ल कुन्त शल्य बर्छा जे मुद्गर ।
एका बेळे बिन्धिलेक प्रभु रामबीर ।। ९८ ।।
दइत्य अंगरे पड़ि सबु हेला चूर्ण ।
ताहा देखि चमत्कार हेले रघुराण ।। ९९ ।।
श्रीराम लक्ष्मण जेते बाण शिखिथिले ।
एका बेळे मंत्र पढ़ि दैत्यकु माइले ।। १०० ।।
दइत्य अंगरे पड़ि सबु हेला चूर ।
धनु अस्त्र छाड़ि उभा हेले रघुबीर ।। १०१ ।।
लक्ष्मणंकु बोइले न मरिब असुर ।
कि बुद्धि करिबा कह भाइरे मोहर ।। १०२ ।।
एहा शुणि सउमित्री धनुधरि करे ।
अंकुपत्र प्रहारिले दइत उपरे ।। १०३ ।।
कुठार मुद्गर शक्ति धरिण बिन्धिले ।
शूळशक्ति बज्रशक्ति कोपे प्रहारिले ।। १०४ ।।

असुर के ऊपर गिरकर चूर-चूर हो गया । ९६ पराक्रमी प्रभु राघव ने ब्रह्मशक्ति छोड़ दी । उसके बाद ब्रह्मशूल से प्रहार किया । ९७ फिर पराक्रमी प्रभु राम ने शक्ति, भाले, कुन्त, शल्य, बर्छा तथा मुग्दर इत्यादि एक साथ छोड़ दिये । ९८ दैत्य के अंग पर गिरकर सब चूर-चूर हो गये, जिसे देखकर श्री रघुराज आश्चर्यचकित हो गये । ९९ श्रीराम तथा लक्ष्मण ने जितनी बाणविद्या सीखी थी, उन सबको अभिमंत्रित करके एकबारगी उन्होंने दैत्य पर प्रहार किया । १०० दैत्य के शरीर पर गिरकर सब चूर-चूर हो गये । पराक्रमी राघव धनुष तथा अस्त्र छोड़कर खड़े हो गये । १०१ वह लक्ष्मण से बोले कि राक्षस नहीं मरेगा । हे मेरे भाई ! बोलो ! अब क्या उपाय किया जाय ? १०२ यह सुनकर लक्ष्मण ने हाथ में धनुष लेकर दैत्य के ऊपर अंकुपत्र से प्रहार किया । १०३ उन्होंने कुठार, शक्ति तथा मुग्दर लेकर छोड़ दिये और फिर कुपित होकर शूलशक्ति तथा वज्रशक्ति से प्रहार किया । १०४ जिस बाण से

जेउँ बाणे पृथ्वी कम्पे गिरि पड़े झरि ।
सेहि शर चूर्ण हेला दैत्य अंगे पड़ि ।। १०५ ।।
देखिण विस्मय हेले तेजि शरासन ।
शस्त्र छाड़ि उभा हेले सुमित्रानन्दन ।। १०६ ।।
देखि हनुमन्त बीर महा कोप कला ।
पर्वत गोटाए हनु उपाड़ि आणिला ।। १०७ ।।
असुर उपरे बेगे पिटिलाक नेइ ।
चूर्ण होइ गिरिवर पड़े भांगि जाइ ।। १०८ ।।
देखि हनुमन्त बीर कोपेण धाइँला ।
बज्र बिधा गोटा दैत्य पिठिरे माइला ।। १०९ ।।
बिधाघाते दैत्यपति पड़िला भुमिरे ।
आण्ठु भरा देइ उठे किछि क्षण परे ।। ११० ।।
कोपे गळगाजि उठि दराण्डि धरइ ।
आरे रे वानर बोलि तळे कचाड़इ ।। १११ ।।
पकाइ हनुकु माड़ि बसिला असुर ।
बार बार भुजदण्ड मारे दैत्य बीर ।। ११२ ।।
ओलटाइ माड़ि हनु बसिला दैत्यकु ।
पुणि दैत्य ओलटाइ धइला हनुकु ।। ११३ ।।

पृथ्वी काँप उठती थी, पहाड़ ढह पड़ते थे, वही बाण दैत्य के शरीर पर लग कर चूर-चूर हो गये । १०५ यह देखकर सुमित्राकुमार लक्ष्मण विस्मित होकर अस्त्र-शस्त्र, धनुष को त्यागकर खड़े हो गये । १०६ यह देख पराक्रमी हनुमन्तलाल को बड़ा क्रोध आ गया । वह एक पर्वत उखाड़ लाये । १०७ उसे लेकर उन्होंने दैत्य के ऊपर दे मारा । वह विशाल पहाड़ टूटकर चूर-चूर होकर गिर पड़ा । १०८ यह देख पराक्रमी हनुमान कुपित होकर दौड़े । उन्होंने दैत्य की पीठ पर एक वज्रमुष्टि का प्रहार किया । १०९ मुष्टिका के आघात से दैत्यराज पृथ्वी पर गिर पड़ा, फिर कुछ क्षणों के पश्चात् घुटनों के बल उठ पड़ा । ११० क्रुद्ध होकर हुंकार भरते हुए उसने खदेड़कर हनुमान को पकड़ लिया तथा 'अरे रे वानर' कहकर पृथ्वी तल पर पछाड़ने लगा । १११ हनुमान को गिरा कर वह ऊपर चढ़ बैठा और पराक्रमी दैत्य भुजदण्डों से बारम्बार प्रहार करने लगा । ११२ हनुमान दैत्य को उलटा कर उस पर चढ़ बैठे, फिर दैत्य ने पलटकर हनुमान को पकड़ लिया । ११३ उठा-पटक करके दोनों ही

धरा धरि होइ बेनि जन जुद्ध कले।
श्रीराम लक्ष्मण घुंचि पूररे रहिले ॥ ११४ ॥
हनुमन्त असुर जे करुछन्ति रण।
पाद घाते मेदिनी कम्पिला घन घन ॥ ११५ ॥
भुजे भुज अंगे अंग पिटापिटि होन्ति।
जेन्हे दुइ षण्ड क्रोधे लड़ेइ करन्ति ॥ ११६ ॥
पर्वतरे पर्वत कि बाजु अछि अवा।
से बेनि बीरंक जुद्ध कि उपमा देवा ॥ ११७ ॥
घोर गरजन करि समर करन्ति।
कम्पइ पाताळपुरे वासुकि नृपति ॥ ११८ ॥
पाञ्च दिन परिजन्ते होइला समर।
केहि न घुञ्चन्ति रणे दुहेँ सम बीर ॥ ११९ ॥

देवगणंकर सीतांक स्तुति, सीता मंगळाकंठारु पुष्पधनु प्राप्त होइ असुरकु यौवन देखाइ पुष्पशर मारिबारु असुरर सीतांक प्रति पाप प्रलोभन, तहुँ राम ओ लक्ष्मणंक द्वारा सहस्रशिरा रावणर मृत्यु

एहा देखि देवगण तरस्त होइले।
भो देवी जानकी रख बोलिण डाकिले ॥ १ ॥

युद्ध कर रहे थे। श्रीराम तथा लक्ष्मण हटकर दूर ही रहे। ११४ हनुमान तथा राक्षस युद्ध कर रहे थे। उनके पैरों की चपेट से पृथ्वी कसमसा रही थी। ११५ हाथों में हाथ तथा अंग से अंग भिड़ाकर मारधाड़ हो रही थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कुपित होकर दो साँड़ लड़ाई कर रहे हों। ११६ अथवा क्या पर्वत से पर्वत टकरा रहे हैं? उन दोनों वीरों के युद्ध की क्या उपमा दी जाय? ११७ भीषण गर्जना करके युद्ध कर रहे थे जिससे नागराज वासुकि पाताललोक में कम्पित हो रहे थे। ११८ पाँच दिनों तक यह युद्ध चलता रहा। दोनों ही बराबरी के योद्धा थे। युद्ध में कोई भी पीछे नहीं हट रहा था। ११९

देवताओं द्वारा सीता की स्तुति; सीता द्वारा मंगला देवी से पुष्प-धनुष की प्राप्ति; असुर को यौवन-दर्शन कराना; पुष्पशर के आघात से उसके मन में पाप-प्रलोभन होना; राम और लक्ष्मण द्वारा सहस्रशिरा रावण की मृत्यु

यह देखकर देवता लोग त्रस्त हो गये। "हे देवी जानकी! रक्षा करो" कहकर पुकारने लगे। १ हम लोगों का उद्धार करके स्वर्ग की

आम्भंकु उद्धार करि स्वर्ग रक्षा कर।
शरण पशिलु देवी तुम्भर पयर ॥ २ ॥
एमन्ते बहुत स्तुति कले देवगण।
जानकी बोइले निश्चे मारिबि रावण ॥ ३ ॥
समुद्ररे पशि देवी सारिलेक स्नान।
अष्ट अळंकार माए कले आभरण ॥ ४ ॥
कर जोड़ि मंगळाकु माता कले स्तुति।
जय जय मंगळागो जय हैमवती ॥ ५ ॥
जय सर्व मंगळागो जय महामाई।
शरण रक्षणी तोह बिना केहि नाहिँ ॥ ६ ॥
तुहि देवी महामाई महिषा मर्दिनी।
झंकडपुर वासिनी ईश्वर घरणी ॥ ७ ॥
ए संसार पाळु मा आतंगे हेउ साहा।
भारा निवारिणी गो अपर्णा महामाया ॥ ८ ॥
तोते आश्रे कलि मुहिँ विपद काळरे।
कष्ट पाइलेणि प्रभु असुर जुद्धरे ॥ ९ ॥
दइत्यकु मारि न पारिले रघुराए।
प्रसन्न होइण बर दिअ महामाए ॥ १० ॥

रक्षा करो। हे देवि! हम आपके चरणों की शरण ग्रहण करते हैं। २ इस प्रकार देवताओं ने बहुत स्तुति की। जानकी ने कहा कि मैं निश्चय ही रावण का वध कर दूँगी। ३ देवी सीता ने सागर में उतर कर स्नान किया और माता सीता ने अष्ट अलंकारों से अपने को आभूषित किया। ४ माता जानकी ने हाथ जोड़कर मंगला देवी की स्तुति की। हे मंगला! हे हिमांचलकुमारी! तुम्हारी जय हो, जय हो, जय हो। ५ हे महामाया सर्वमंगले! तुम्हारी जय हो। हे शरणागत-रक्षिणी! तुम्हारे सिवाय कोई नहीं है। ६ हे देवी जगज्जननी! तुम महिषासुर का विनाश करनेवाली हो। झंकड़पुर में निवास करनेवाली शंकर जी की गृहिणी हो। ७ हे माता! तुम संसार का पालन करनेवाली हो। इस विपत्ति के समय हमारी सहायता कीजिए। तुम भार से उद्धार करनेवाली महामाया अपर्णा हो। ८ इस विपत्ति के समय मैंने आपका आश्रय ग्रहण किया है। मेरे स्वामी को असुर के साथ युद्ध करने में बहुत कष्ट हुआ है। ९ रघुनाथ जी दैत्य का वध नहीं कर पाये।

त्राहि कर त्राहि कर आतंगे डाकइ ।
मारिबि दैत्यकु हस्ते अस्त्र किछि नाहिं ॥ ११ ॥
जय कात्यायिनी मा गो मोते रक्षा कर ।
मुहिँ जे शरण पादे सर्वदा तोहर ॥ १२ ॥
एमन्ते बहुत स्तुति कले बइदेही ।
जय सर्व मंगळांकु मने मने ध्यायि ॥ १३ ॥
ज्योतिर्मय भुवनरे महामाई थिले ।
जानकी स्मरणे तांक आसन कम्पिले ॥ १४ ॥
मनरे जाणिले देवी जानकी सुमरे ।
सिंहवाहिनी जे बिजे कले सिंह परे ॥ १५ ॥
जानकीदेवींकि माए प्रसन्न होइले ।
पुष्पधनु पंच शर बढ़ाइण देले ॥ १६ ॥
पुष्पधनु शर पाइ जनककुमारी ।
चरण कमळ तळे नमस्कार करि ॥ १७ ॥
गर्भर भितरे ताहा पुराइले नेइ ।
चित्रसेन सन्निधाने मिळिलेक जाइ ॥ १८ ॥
रथ सज कर चित्रसेनकु बोइले ।
घोर जुद्ध करि प्रभु कष्ट जे पाइले ॥ १९ ॥

हे महामाया ! आप प्रसन्न होकर वर प्रदान करें । १० रक्षा करो ! रक्षा करो ! विपत्ति के समय पुकार रही हूँ । मैं दैत्य का वध करूँगी, परन्तु मेरे हाथ में कोई अस्त्र नहीं है । ११ हे कात्यायिनी ! तुम्हारी जय हो । हे माता ! मेरी रक्षा करो । मैं सदा सर्वदा आपके चरणों की शरण में हूँ । १२ इस प्रकार वैदेही ने अनेक प्रकार से सर्वमंगला देवी का मन ही मन ध्यान करके उनकी बहुत स्तुति की । १३ महामाया ज्योतिर्लोक में थी । जानकी के स्मरण-चिन्तन से उनका आसन हिलने लगा । १४ उन्होंने मन में जान लिया कि देवी सीता मेरा स्मरण कर रही है । सिंह पर सवार होकर सिंहवाहिनी वहाँ प्रकट हो गयी । १५ देवी माता सीता जी पर प्रसन्न हो गयीं । उन्होंने फूल का धनुष तथा पाँच बाण बढ़ा दिये । १६ जनकनन्दिनी ने पुष्प-धनुष तथा बाण पाकर चरण-कमलों में प्रणाम किया । १७ उसे लेकर अपने गर्भ में छिपा लिया तथा चित्रसेन के निकट जा पहुँची । १८ वह चित्रसेन से रथ सजाने को कहते हुए बोली कि घोर युद्ध करके प्रभु को कष्ट मिला

चाल चित्रसेन बेगे तांक पाशे जिबा ।
उपाय भिआण करि असुर मारिबा ।। २० ।।
एहा कहि चित्रसेन रथ सजाड़इ ।
रथ परे बइदेही बिजे कले जाइ ।। २१ ।।
चित्रसेन गगनरे रथ घेनि गले ।
संग्राम भुमिरे जाइ रथ रूहाइले ।। २२ ।।
देखिलेक धनु तजि बसिछन्ति राम ।
असुर संगरे हनु कशछि संग्राम ।। २३ ।।
जानकी डाकिले शुण आहे रघुसाइँ ।
जुद्ध कलाबेळे धनु छाड़िल किम्पाइ ।। २४ ।।
श्रीराम बोइले मुहिँ न पारिलि मारि ।
मोर शर मान सबु दैत्य देला गिळि ।। २५ ।।
जानकी बोइले हस्ते धनु शर धर ।
हेळा न करिण बेगे असुरकु मार ।। २६ ।।
शुणिण कोदण्ड हस्ते धइले श्रीराम ।
मंत्र पढ़ि बिन्धलेक पाञ्च लक्ष बाण ।। २७ ।।
असुर उपरे पड़ि सबु हेला चूर ।
बिन्धिलेक राम पुणि सात लक्ष शर ।। २८ ।।

है । १९ चित्रसेन ! चलो, शीघ्र ही उनके पास चलें तथा उपाय करके असुर का वध करें । २० ऐसा कहने पर चित्रसेन ने रथ सजा दिया । वैदेही जाकर रथ पर विराजमान हो गई । २१ चित्रसेन रथ को आकाश में ले गया और समरभूमि में पहुँचकर उसने रथ रोक दिया । २२ उन्होंने देखा कि श्रीराम धनुष त्याग कर बैठे हैं । असुर के साथ हनुमान संग्राम कर रहे हैं । २३ जानकी ने पुकारकर कहा, हे रघुनाथ जी ! सुनिए । युद्ध करते समय आपने धनुष का परित्याग किसलिए कर दिया है ? २४ श्रीराम ने कहा कि मैं दैत्य को नहीं मार सका । मेरे सभी बाणों को दैत्य निगल गया । २५ जानकी ने कहा कि आप शीघ्र हाथों में धनुष-बाण धारण कर लें और प्रमाद न करके शीघ्र ही दैत्य का वध करें । २६ यह सुनकर श्रीराम ने हाथ में कोदण्ड उठा लिया । उन्होंने मंत्र पढ़कर पाँच लाख बाण छोड़ दिये । २७ दैत्य के ऊपर गिरकर सभी बाण चूर-चूर हो गये । तब श्रीराम ने सात लाख बाण छोड़ दिये । २८ वह सभी बाण चूर्ण होकर नष्ट हो गये । तब

चूर्ण होइ भांगि गला से समस्त बाण।
दश लक्ष बाण पुणि बिन्धिले लक्ष्मण ॥ २९ ॥
असुरर अंगे बाजि सबु हेला चूर्ण।
अपसरि गले तहिँ सुमित्रानन्दन ॥ ३० ॥
देखिण जानकीदेवी महा कोप कले।
आरे रे दइत्य बोलि उच्चे डाक देले ॥ ३१ ॥
अपूर्व मूरति धइलेक बइदेही।
असुर आगरे सती उभा हेले जाइ ॥ ३२ ॥
देखि गगनकु चाहिँ देलाक असुर।
महाकोपे दैत्य अंग कम्पे थरहर ॥ ३३ ॥
नव जउवन सती देलेक देखाइ।
पंचशर बेगे पुष्प धनुरे चढ़ाइ ॥ ३४ ॥
आपणा गर्भरु काढ़ि जनक दुलणी।
असुर उपरे देवि बिन्धिलेक टाणि ॥ ३५ ॥
कन्दर्पर पंचशर अंगरे बाजिला।
बेलुबेळ दैत्यतनु आतुर होइला ॥ ३६ ॥
जानकींकि कहे चाहिँ से बिलंका राजा।
बिकळे बोलइ मोर हुअ तु भारिजा ॥ ३७ ॥
श्रीराम संगते तुहि कि सुख पाइबु।
ए बिलंका पुरे मोर बिपुळ भुंजिबु ॥ ३८ ॥

लक्ष्मण ने दस लाख बाण छोड़े। २९ असुर के शरीर से लगकर सबके सब चूर-चूर हो गये। तब वहाँ से सुमित्राकुमार लक्ष्मण हट गये। ३० यह देखकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर देवी सीता ने 'अरे दैत्य' कहकर उसे उच्च स्वर में ललकारा। ३१ वैदेही ने अत्यन्त सुन्दर रूप धारण किया और सती सीता असुर के समक्ष जाकर खड़ी हो गई। ३२ यह देखकर राक्षस ने आकाश की ओर दृष्टिपात किया। दैत्य का शरीर महान क्रोध के कारण थरथरा रहा था। ३३ सती जनकनन्दिनी ने नया यौवन दिखा दिया तथा शीघ्र ही पाँच बाण अपने गर्भ से निकालकर सुमन-धनुष पर चढ़ाकर खींचे तथा उस असुर के शरीर पर छोड़ दिये। ३४-३५ कामदेव के पाँचों बाण उसके शरीर में धँस गये। धीरे-धीरे दैत्य का अंग आतुर हो उठा। ३६ वह बिलंकेश जानकी को देखकर विकल होकर कहने लगा कि तुम मेरी पत्नी बन जाओ। ३७ श्रीराम के साथ

जानकी बोइले तुहि श्रीरामंकु मार ।
शुणिण चळिला बेगे बिलंका ईश्वर ।। ३९ ।।
बळवीर्य राजार जे पड़िला मिळाइ ।
अनळ लागिले जेन्हे घृत तरळइ ।। ४० ।।
श्रीरामंक निकटकु असुर धाइँला ।
तोते मारि जानकींकि हरिबि बोइला ।। ४१ ।।
देखि धनु धरि कोपे से कोदण्डधर ।
पाशुपत बाण बेगे करिण प्रहार ।। ४२ ।।
दुइ शत मुण्ड तार काटि पकाइले ।
लक्ष्मण ता भुजबळ छेदि पकाइले ।। ४३ ।।
देखिण विकळ हेला प्रतापी असुर ।
पुणिहिँ बावळ बाण बिन्धि रघुबीर ।। ४४ ।।
पांच शत मुण्ड तार पकाइले हाणि ।
तिनि शत मुण्ड राम काटिलेक पुणि ।। ४५ ।।
उबुरा जेतेक भुज मुण्ड तार थिला ।
बाणे सउमित्री ताहा काटि पकाइला ।। ४६ ।।
प्राण छाड़ि असुर जे पड़िला भुमिरे ।
देह तार बिकाशइ मेरुर आकारे ।। ४७ ।।

तुम्हें क्या सुख प्राप्त होगा ? मेरे इस बिलंका नगर में तुम अपार सुख का भोग करोगी । ३८ जानकी बोली कि तू श्रीराम को मार । यह सुनकर बिलंका का ईश्वर शीघ्रता से चल पड़ा । ३९ राजा का बल-वीर्य पिघल चुका था । जिस प्रकार आग लगने पर घी तरल हो जाता है । ४० दैत्य श्रीराम के निकट दौड़ा और बोला कि तुझे मारकर जानकी का हरण करूँगा । ४१ यह देखकर कोदण्डधारी राम ने धनुष उठाकर पाशुपत बाण से शीघ्र ही उस पर प्रहार किया । ४२ (श्रीराम ने) उसके दो सौ सिर काट गिराये । लक्ष्मण ने उसकी भुजाएँ काट डालीं । ४३ यह देखकर प्रतापी दैत्य व्याकुल हो गया । पराक्रमी राघव ने फिर बावल नामक बाण चलाकर उसके पाँच सौ सिर काट गिराये । फिर राम ने उसके तीन सौ मुण्ड काट डाले । ४४-४५ बचे-खुचे मुण्ड और भुजाओं को लक्ष्मण ने बाण से काट गिराया । ४६ प्राण त्यागकर दैत्य पृथ्वी पर गिर पड़ा । उसका शरीर सुमेरु पर्वत के आकार में फैला पड़ा था । ४७ यह देखकर देवता लोग प्रसन्न हो गये तथा उन्होंने

एहा देखि देवगण हरष होइले ।
श्रीराम लक्ष्मण शिरे पुष्प वृष्टि कले ।। ४८ ।।
जय जय ध्वनि कले देव पुरन्दर ।
उश्वास होइला आजि पृथिबीर भार ।। ४९ ।।
असुरकु जुद्धे मारि कोदण्ड धारण ।
घन घन निःश्वास जे छाड़िले श्रीराम ।। ५० ।।
देवंकु बोइले गोटा लुहालइ आण ।
लुहामइ बुलाइबि बिलंका भुवन ।। ५१ ।।
एहा शुणि देवगण हरष होइले ।
लुहामइ गोटा आणि देवगण देले ।। ५२ ।।
सीता घेनि मह परे बसिले श्रीराम ।
लुहामइ बुलाइले बिलंका भुवन ।। ५३ ।।
खाल डिप जमिसबु समतुल कले ।
दैत्य गण्डि मुण्ड समुद्ररे पकाइले ।। ५४ ।।
चित्रसेनकु बोइले जाअ स्वर्गपुर ।
अजोध्याकु बाहारिले से कोदण्डधर ।। ५५ ।।
श्रीराम लक्ष्मण पुणि सीता हनुमान ।
रथर उपरे जाइ कले आरोहण ।। ५६ ।।
गगन मार्गरे रथ चळाइण गले ।
तिनिदिने अजोध्यारे प्रवेश होइले ।। ५७ ।।

श्रीराम और लक्ष्मण के शिर पर पुष्पों की वर्षा कर दी । ४८ इन्द्र देव ने जयध्वनि करते हुए कहा कि आज पृथ्वी का भार उतर गया । ४९ कोदण्डधारी श्रीराम युद्ध में दैत्य का वध करके वेग से निःश्वास छोड़ने लगे । ५० श्रीराम ने (देवताओं से) कहा कि एक लोहे की सिरावन ले आओ । इस बिलंका नगर में सिरावन चला देंगे । ५१ यह सुनकर देवगण प्रसन्न हो गये और उन्होंने एक लोहे की सिरावन लाकर दी । ५२ सिरावन के ऊपर सीता को लेकर श्रीराम बैठ गये और उन्होंने बिलंकानगर में लोह-सिरावन फिरा दी । ५३ ऊँची-नीची भूमि को समतल कर दिया तथा दैत्य के अवशेष को सागर में गिरा दिया । ५४ चित्रसेन को स्वर्ग जाने के लिए कहकर कोदण्डधारी श्रीराम लक्ष्मण, सीता और हनुमान के साथ रथ के ऊपर चढ़ गये और अयोध्या के लिए निकल पड़े । ५५-५६ आकाशमार्ग से रथ को चलाकर तीसरे दिन अयोध्या

जानकींकि घेनिण पशिले अजोध्यारे।
अभिषेक सारि बिजे सिंहासन परे॥ ५८ ॥
ईश्वर बोलन्ति देवी पार्वति गो शुण।
अपूर्व चरित ए बिलंका रामायण॥ ५९ ॥
जय जय हिंगुळा गो जय माहेश्वरी।
तोहर प्रसादे सिन्धु हेळे गलि तरि॥ ६० ॥
जय जय अपर्णा गो तो पादे शरण।
शारळादासकु मात कर परित्राण॥ ६१ ॥
आहे साधु सुज्ञजने मोर निबेदन।
दोषादोष थिले क्षमा करिब आपण॥ ६२ ॥
झंकड़वासिनी मात अभया कृपारे।
जनहिते ए ग्रन्थकु कलि मुँ भाषारे॥ ६३ ॥
हिंसा क्रोध कपटता मनु दूर करि।
ए ग्रन्थ पढ़िले तरि जिब भव बारि॥ ६४ ॥
श्रीरामंक नाम जेहु थरे सुमरिब।
ताहार सकळ पाप दहन होइब॥ ६५ ॥

में जाकर प्रविष्ट हुए। ५७ जानकी को लेकर वह अयोध्या में तथा अभिषेक के उपरान्त सिंहासन पर विराजमान हुए। ५८ शंकर बोले, हे देवी पार्वती! सुनो। यह बिलंका रामायण अपूर्व चरित्रों पूर्ण है। ५९ हे हिंगुला! हे माहेश्वरी! तुम्हारी जय हो। तुम्ह ही प्रसाद से समुद्र (के समान) होने पर भी (हम) उसे पार गये। ६० हे अपर्णा! हम तुम्हारे चरणों की शरण में हैं। तुम्ह जय हो! जय हो! हे माता! शारलादास की रक्षा करो। ६१ सज्जन एवं विद्वज्जन! मेरा आपसे निवेदन है कि दोष एवं त्रुटि होने पर मुझे क्षमा करेंगे। ६२ झंकड़पुरनिवासिनी माता अभया कृपा से लोक-हितार्थ मैंने इस ग्रन्थ को (उड़िया) भाषा में कि है। ६३ हिंसा, क्रोध, कपट को मन से दूर हटाकर इस ग्रन्थ को प से संसार-सागर से पार हो जाओगे। ६४ जो भी श्रीराम के नाम स्मरण एक बार भी करेगा, उसके सभी पाप क्षार हो जाएंगे। ६५ राम राम! राम! —यह नाम मुक्ति का द्वार है। हे साधु जन! इस

राम राम राम नाम मुकतिर द्वार।
पान करि संसारहु तर साधु नर॥ ६६ ॥
पान कर दुःख सुख सबु हेब दूर।
श्रीराम नामामृतकु पिअ सुज्ञ नर॥ ६७ ॥

॥ इति श्री बिलंका रामायण सदाजये सम्पूर्ण ॥

पान करके संसार से तर जाओ। ६६ इसे पान करो! दुःख-सुख सब दूर हो जायगा। हे रसज्ञ जन! श्रीराम-नामामृत का पान करो। ६७

॥ बिलंका रामायण (पूर्वखण्ड) समाप्त ॥

बिलंका रामायण

उत्तर खण्ड

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ।।
वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा ।
आदौ चान्तं च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ।।
नमामि रामं रघुवंशमाख्यं ।
नमामि रामं सुरकल्पवृक्षम् ।।
नमामि रामं कमळायताक्षम् ।
नमामि रामं रघुनन्दनाख्यम् ।।

पार्वतीक प्रश्न ओ रामंक अज्ञानर कारण वर्णन

बन्दइ काळिका मागो दुरित नाशिनी ।
बन्दइ काळिका मागो अभय दायिनी ।। १ ।।
बन्दइ काळिका मागो तो पयर बेनि ।
बन्दइ काळिका मागो जगत जननी ।। २ ।।
जगत जनंकु मात पालु जे संहारु ।
तोहर महिमा मागो अपार अपाहँ ।। ३ ।।

श्री गिरिजा जी के प्रश्न तथा श्रीराम जी के अज्ञान के कारण का वर्णन

दुःख का नाश करनेवाली माँ कालिका की मैं वन्दना करता हूँ। अभय प्रदान करनेवाली माता कालिका की वन्दना करता हूँ। १ माँ काली ! तेरे युगल चरणों की वन्दना करता हूँ। हे जगज्जननी माता कालिका ! मैं तुम्हारी वन्दना करता हूँ। २ हे माता ! संसार के प्राणियों का पालन तथा संहार तुम ही करती हो। तुम्हारी महिमा अपार से भी अपरंपार है। ३ हे माता ! तुम शारला तथा मंगला के नाम से विख्यात

मात तु शारळा पुणि मंगळा बोलाउ ।
नाम तोहर असंख्य केते रूपे थाउ ॥ ४ ॥
हस्तरे खपर धरि करु मा संहार ।
तोहर दाढ़ु उबुरि न पारन्ति हर ॥ ५ ॥
ब्रह्मा विष्णु इन्द्र चन्द्र कुबेर बरुण ।
एणु बन्दुथान्ति नित्य तोहर चरण ॥ ६ ॥
तोर कृपा नोहिले कि मुँ मूढ़ मुरुख ।
रामायण लेखिबाकु होइबइँ शक्य ॥ ७ ॥
सामवेदु जात जेउँ रामायण ग्रन्थ ।
शिवंकर पंचमुखे होइछि उकत ॥ ८ ॥
ताहा मुहिँ लेखुअछि नाहिँ मोर दोष ।
जाहा तु कहुछु ताहा करइ प्रकाश ॥ ९ ॥
सत हेउ मिछ हेउ तोहर जा आज्ञा ।
ताहा मुहिँ केबे न करि पारे अवज्ञा ॥ १० ॥
जगत जननी काळी चरणे शरण ।
दीन मूढ़ जगन्नाथ अटे हीन जन ॥ ११ ॥
जयतु जयतु राम करुणा सागर ।
राक्षसंक पाइँ सिना तोर अवतार ॥ १२ ॥

हो। तुम्हारे असंख्य नाम हैं तथा भिन्न-भिन्न रूपों में विद्यमान हो। ४ हे माँ! तुम हाथ में खप्पर धारण करके संहार करती हो। तुम्हारी दाढ़ से शंकर भी नहीं बच पाते। ५ इसी कारण से ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्र, कुबेर तथा वरुण नित्य तुम्हारे चरणों की वन्दना में लगे रहते हैं। ६ तुम्हारी दया न होने से क्या मेरे जैसा मूढ़ एवं मूर्ख रामायण लिखने में समर्थ हो सकता था? ७ सामवेद से उत्पन्न जो रामायण ग्रन्थ है वह शिव के पाँचवें मुख से कहा गया है। ८ मैं उसी को लिख रहा हूँ। इसमें मेरा दोष नहीं है। जो तुम प्रेरित करती हो मैं उसी को प्रकाशित कर रहा हूँ। ९ सत्य हो अथवा असत्य तुम्हारी जो भी आज्ञा है उसकी अवहेलना मैं कभी भी नहीं कर सकता। १० दीन एवं मूर्ख जगन्नाथ एक हीन व्यक्ति है तथा जगज्जननी माता काली के चरणों की शरण में है। ११ दया के सिन्धु श्रीराम! तुम्हारी जय हो! जय हो! राक्षसों के कारण ही आपका अवतार हुआ है। १२ आपने पतित-तारण नाम

तोहर चरण तळे पशुछि शरण ।
नाम बहिछु तु जेणु पतित तारण ।। १३ ।।
लेखुछि चरित तोर नाहिँ मोर दोष ।
जेहुँ मुहिँ तव पाद दासर मुँ दास ।। १४ ।।
शिव पार्वतींक पादे पशिलि शरण ।
जगतर पिता माता जेउँ दुइ जण ।। १५ ।।
शंकर कहन्ति देवी पार्वती शुणन्ति ।
कैलास परबते बसि हैमबती ।। १६ ।।
हर चरणरे पड़ि बोलन्ति भो नाथ ।
तुम्हे त परमजोगी जोगमार्गे रत ।। १७ ।।
भोळे समस्तंकु बर दिअ महेश्वर ।
शत्रु मित्र बोलि किछि नाहिँ न बिचार ।। १८ ।।
एणु तुम्भंकु बोलन्ति भोळानाथ जोगी ।
किंचित कथारे नाथ जाअपुणि रागि ।। १९ ।।
एणु कहिबाकु मोते माड़ु अछि डर ।
टिकिक कथारे चिढ़ि लेंगिटिकि चीर ।। २० ।।
चिढ़ि चिढ़ि काहाकु जे दिअ बड़ करि ।
काहाकु बा कोप करि रसातळे भरि ।। २१ ।।

वहन कर रखा है। मैं आपकी चरण-शरण में आया हूँ। १३ मैं आपका चरित्र लिख रहा हूँ। मेरा कोई दोष नहीं है। क्योंकि मैं आपके चरण-सेवकों का दास हूँ। १४ भगवान शंकर एवं पार्वती जो दोनों संसार के माता और पिता हैं, मैं उनके चरणों का आश्रित हूँ। १५ (जिस चरित्र को) शंकर जी कहते हैं तथा हिमांचलकुमारी पार्वती कैलास पर्वत पर बैठकर जिसे सुनती हैं। उन्होंने भगवान शंकर के चरणों में नमन करते हुए कहा, हे नाथ ! तुम तो योगमार्ग में निमग्न रहनेवाले परम योगी हो। १६-१७ हे महेश्वर ! आप शत्रु व मित्र का किसी भी प्रकार का विवेचन न करके सभी को प्रसन्न होकर वर दे देते हैं। १८ इसी कारण आपको भोला नाथ योगी कहा जाता है। हे नाथ ! आप थोड़ी सी बात पर कुपित भी हो जाया करते हैं। १९ इसी कारण से मुझे कहने में भय भी लग रहा है। क्योंकि आप छोटी सी बात पर चिढ़कर लँगोटी फाड़ने लगते हैं। २० चिढ़कर किसी को महान बना देते हैं और किसी पर कुपित होकर रसातल में पटक देते हैं। २१ हे प्राणेश्वर ! आप तपस्या

तपे बर कोपे बर दिअ प्राण नाथ।
तुम्भ महिमा न जाणे देव शचीनाथ॥ २२ ॥
न जाणन्ति ब्रह्मा-विष्णु महिमा तुम्भर।
देवंक उपरे तुम्भे महादेव हर॥ २३ ॥
केते बेले केउँ वेश के पारिब जाणि।
बसिबा शोइबा स्थान तुम्भर मशाणि॥ २४ ॥
मनरे सन्देह मोर होइबारु जात।
पचारिबा पाइँ डर माडुछि भो नाथ॥ २५ ॥
लेंगुटि खण्डिक काळे पकाइब चिरि।
पळाइब काळे एथु कपाळकु धरि॥ २६ ॥
मोर कथाकु त नाथ चळ पुणि बेशि।
मुहिँ सत कहि बारु आहे काशी बासी॥ २७ ॥
पार्वतींक कथा शुणि हसिले शंकर।
बोइले प्रिया किम्पाइँ एते तोर डर॥ २८ ॥
तु मोहर अर्धअंग मुँ तोहर प्राण।
तोहर मोहर किछि नाहिँ भिन्नाभिन्न॥ २९ ॥
तु जीव परम मुहिँ सिना आगो सती।
तु पिण्ड ब्रह्माण्ड मुहिँ एथिरे कि भीति॥ ३० ॥

करने पर और काप करने पर भी वर दे दिया करते हैं। हे देव! तुम्हारी महिमा को देवेन्द्र भी नहीं समझ पाते। २२ ब्रह्मा तथा विष्णु भी आपकी महिमा को नहीं जानते। हे हर! आप देवों के भी देव, महादेव हो। २३ कौन जान सकता है कि किस समय आपका क्या वेश हो। श्मशान तो आपके बैठने व सोने का स्थान है। २४ मेरे मन में सन्देह उत्पन्न हो जाने पर भी, हे नाथ! मुझे पूछने में भय लग रहा है। २५ थोड़ी ही देर में आप लँगोटी को फाड़कर फेंक देंगे। अथवा कपाल को लेकर यहाँ से भाग जाएँगे। २६ हे नाथ! आप मेरी बात अधिकतर टाल जाते हैं। हे काशी-बासी! मैं आपसे सत्य ही कह रही हूँ। २७ पार्वती की बातों को सुनकर शंकर जी हँसते हुए कहने लगे कि हे प्रिये! तुम्हें इतना डर किस बात का है। २८ तुम मेरा आधा अंग हो! मैं तुम्हारा प्राण हूँ। तुममें और मुझमें किंचित् भी भिन्नता नहीं है। २९ हे सती! तुम जीव हो तो मैं परमात्मा हूँ। तुम पिण्ड और मैं ब्रह्माण्ड हूँ। इसमें भय किस प्रकार का? ३० मैं दिन

मुहिँ दिन तुहि राति कि भावना तोर।
तो घेनि करुछि सिना मुहिँ ए संसार॥ ३१ ॥
तोते छाड़ि काहिँ रहि पारिबि कि क्षणे।
उठ उठ सखी किम्पा पड़िछु चरणे॥ ३२ ॥
कहिछि तोते गुपत ब्रह्मज्ञान गोटा।
जेउँ ज्ञान बळे मुहिँ होइलि लांगटा॥ ३३ ॥
से गुपत धन गोटा समर्पिलि तोते।
जाहा केहि न जाणन्ति ए तिनि जगते॥ ३४ ॥
जाहा पचारिबु ताहा कहिबि नियत।
एमन्त शुणि पार्वती होइ कृतकृत्य॥ ३५ ॥
बोइले नाथ मो आगे कहिल पुराण।
सात खण्ड रामायण आद्य प्रान्त जाण॥ ३६ ॥
बिलंका काण्ड कहिल अनुग्रह करि।
शुणिलि तुम्भ मुखरु भबु गलि तरि॥ ३७ ॥
राम नाम ठारु नाम नाहिँ जे अधिक।
जेउँ नाम गोटि अटे ब्रह्म जे तारक॥ ३८ ॥
जेउँ नामे रत्नाकर पापी गला तरि।
मुशण्ड काक अमर हेला मुखे धरि॥ ३९ ॥

हूँ तो तुम रात्रि हो, इस विषय में तुम्हे सोच कैसा ? तुम्हारे सहयोग से ही मैं इस सृष्टि की रचना करता हूँ। ३१ क्या तुम्हें छोड़कर कहीं मैं एक क्षण भी रह सकता हूँ ? अरी सहचरी ! उठो। पैरों में क्यों पड़ी हो ? ३२ मैंने सम्पूर्ण गोपनीय ब्रह्मज्ञान तुमसे कह दिया है। उसी ब्रह्मज्ञान के बल पर मैं दिगम्बर बना हूँ। ३३ वही गुप्त धन मैंने तुम्हें समर्पित कर दिया है। उसे तीनों लोकों में कोई भी नहीं जानता है। ३४ तुम जो कुछ पूछोगी उसे मैं निश्चय ही कहूँगा। पार्वती जी यह सुनकर कृतकृत्य हो गयीं। ३५ वह बोलीं, हे नाथ ! आपने मुझसे सात खण्ड रामायण, पुराण आदि से अन्त तक कहा है। ३६ कृपा करके आपने बिलंकाकाण्ड का भी वर्णन किया, जिसे आपके मुख से सुनकर मैं संसार से तर गयी। ३७ 'राम' नाम से बढ़कर और कोई भी नाम नहीं है। जो नाम स्वयमेव ब्रह्म है तथा तारनेवाला है। ३८ जिस नाम से पापी रत्नाकर भी तर गया। जिसे मुख में धारण करके काकभुशुण्डि अमर हो गये। ३९ जो नाम ब्रह्मा के गले का रत्नहार बन गया तथा पाप-रूपी अन्धकार को

ब्रह्मार जे कण्ठ रत्न माळा जेउँ नाम।
तुम्भंकु पवित्र कला नाशि पापतम ॥ ४० ॥
गोरुहत्या ब्रह्महत्या स्तिरीहत्या करि।
तरि गल तुम्भे नाथ राम नाम धरि ॥ ४१ ॥
सेहि नाम धरि मुहिँ नाशिल दुष्कृत।
कथा ए सन्देह मने होइला भो नाथ ॥ ४२ ॥
बोइले जगतनाथ राम रूप धरि।
दशरथ राजा राणी गर्भु अवतरि ॥ ४३ ॥
दशशिरा रावणकु मारिबा निमन्ते।
सीता ठाकुराणीकि से वेनिण संगते ॥ ४४ ॥
सात समुद्रकु पारि होइ कले बध।
दशशिरा रावणकु जे जगते अवध्य ॥ ४५ ॥
बिश्रवा ऋषिर पुअ अटइ ब्राह्मण।
ब्रह्मार बरे दर्पिष्ठ होइला रावण ॥ ४६ ॥
सीता हरि नेइ सिन्धु मध्ये थिला लुचि।
समुद्र बान्धि ताहार बंश देले पोछि ॥ ४७ ॥
दशगोटा शिर काटि देले बिषाबळि।
तहुँ जाइँ बिलंकारे पशि कले कळि ॥ ४८ ॥

नष्ट करके जिसने आपको भी पावन कर दिया। ४० गोहत्या, ब्रह्महत्या तथा स्त्रीहत्या करके राम नाम का अवलम्बन करके, हे नाथ! आप भी तर गये। ४१ उसी नाम के द्वारा मेरे पाप नष्ट हुए। हे नाथ! इस बात से मेरे मन में शंका उत्पन्न हो गयी है। ४२ आपने कहा कि जगत के स्वामी ने राजा दशरथ की रानी के गर्भ से उत्पन्न होकर राम-रूप धारण किया। ४३ दशानन का वध करने के लिए सीता देवी को साथ लेकर सात समुद्र पार करके उन्होंने संसार में अवध्य रावण का संहार कर डाला। ४४-४५ बिश्रवा ऋषि का पुत्र ब्राह्मण था। ब्रह्मा के वर के कारण वह रावण घमण्ड से फूल गया था। ४६ सीता का अपहरण करके उसने समुद्र के बीच में उन्हें छिपा रखा था। श्रीराम ने सागर में सेतु बनाकर उसके वंश को मिटा दिया। ४७ वृश्चिक-डंक से उसके दस शिरों को काट डाला। फिर बिलंकानगर में प्रविष्ट होकर युद्ध किया। ४८ देवताओं के लिए श्रीराम ने मानव देह धारण करके राज-

देवंक पाइँ मानव देह धरि राम ।
बहुत कष्ट सहिले छाड़ि राजधर्म ।। ४९ ।।
जगतनाथ किम्पाइँ पाइले ए कष्ट ।
जन्म हेला मात्रे कले असुरंकु नष्ट ।। ५० ।।
ताड़का मारि मुनिक जाग जाइँ रखि ।
मुनिक संगते फळमूळ मान भक्षि ।। ५१ ।।
मृगछालरे शोइण कटाइले काळ ।
राजार घरे जनमि हेला केउँ फळ ।। ५२ ।।
राज्य सुख भोग तेजि पशिले बनस्त ।
राक्षस नाशि मुनिकि करिण निश्चिन्त ।। ५३ ।।
मिथिळारे बिभाहोइ सीता ठाकुराणी ।
तुम्भ धनु गोटाकु से भांगि देइ पुणि ।। ५४ ।।
परशुरामकु बाटे तोष करि आसि ।
राजा हेबा दिन गले बने होइ खुशि ।। ५५ ।।
चउद बरषकाळ सहि कष्ट घोर ।
रावण मारि हुअन्ते पुणि नृपबर ।। ५६ ।।
बिलंका जाइ सहस्रशिराकु माइले ।
पुणि आसि सीतांकु से बनस्ते पेशिले ।। ५७ ।।

धर्म को छोड़कर बड़े कष्ट सहन किये । ४९ जगत के नाथ को किसलिए इतना कष्ट सहन करना पड़ा । जन्म लेते ही उन्होंने राक्षसों का विनाश कर डाला । ५० ताड़का को मारकर उन्होंने जाकर विश्वामित्र मुनि के यज्ञ की रक्षा की । मुनियों के साथ रह कर फल-मूलादि का आहार किया । ५१ मृगछाला पर शयन करके उन्होंने समय व्यतीत किया । फिर राजा के घर में जन्म लेने का उन्हें फल क्या मिला ? ५२ राज्यसुख के उपभोग का परित्याग करके वह वन को चले गये । राक्षसों का विनाश करके उन्होंने मुनियों को चिन्ता-रहित कर दिया । ५३ फिर उन्होंने आपके धनुष को भंग करके मिथिलापुर में देवी सीता से विवाह किया । ५४ परशुराम को मार्ग में सन्तुष्ट करके (अयोध्या में) आकर राजा बनने के ही दिन प्रसन्न होकर वन में प्रस्थान किया । ५५ चौदह वर्षों तक अत्यन्त कष्ट सहन करके रावण का वध करके पुनः राजा होने के समय बिलंका जाकर सहस्रशिरा रावण का संहार किया और [illegible] को उन्होंने वन में भेज दिया । ५६-५७ तीनों लोकों

त्रैलोक्य ठाकुर होइ पाइले ए दुःख ।
एथिर कारण मोते कह पंचमुख ।। ५८ ।।
आबर कथाए एबे कहुअछि शुण ।
सहस्रशिरा नामरे जेबण रावण ।। ५९ ।।
ताहार पुत्रर नाम अटे शतशिरा ।
भाइर नाम ताहार अटइ त्रिशिरा ।। ६० ।।
बापर नाम ताहार लक्षशिरा बीर ।
सेहि कि तहिं नृपति न थिला हे हर ।। ६१ ।।
काहार पुत्र केमन्ते काहा गर्भु जात ।
जगते जन्मि से करिथिला कि कि कृत्य ।। ६२ ।।
केमन्ते मला ता मोते कहिबा बुझाइ ।
बिलंकारे बुलाइले राम लुहामई ।। ६३ ।।
रामंक हाते से मला काहिँ पाइँ पुणि ।
काहा ठारु बर पाइ थिला बीरमणि ।। ६४ ।।
एड़े बळवन्त किम्पा होइले असुरे ।
केमन्ते रहिले कुह से बिलंकापुरे ।। ६५ ।।
से द्वीप गोटि सृजिला किए शूळपाणि ।
दानव बळ पाइला काहुँ सेहि पुणि ।। ६६ ।।

के नाथ होकर भी उन्हें इतना कष्ट मिला । हे पंचानन ! मुझे इसका कारण बताएँ । ५८ अब इसके अतिरिक्त एक बात और कहती हूँ, उसे सुनें । सहस्रशिरा नाम का जो रावण था । ५९ उसके पुत्र का नाम शतशिरा था और उसके भाई का नाम त्रिशिरा था । ६० उसके पिता का नाम पराक्रमी लक्षशिरा था । हे शंकर जी ! क्या वह वहाँ का राजा नहीं था ? ६१ वह किसका पुत्र था और किसके गर्भ से उत्पन्न हुआ था ? इस संसार में जन्म लेकर उसने कौन-कौन से कार्य किये थे ? ६२ उसका निधन कैसे हुआ, यह मुझसे समझाकर कहें ? बिलंका में तो श्रीराम से लोहे की सिरावन चला दी थी । ६३ फिर वह राम के हाथों से किसलिए मारा गया ? उस वीर शिरोमणि को किसके द्वारा वर की प्राप्ति हुई थी ? ६४ असुर इतने शक्तिशाली कैसे बन गये तथा उन्होंने बिलंकापुर को निवास कैसे बनाया ? ६५ हे शूलधर ! उस सम्पूर्ण द्वीप का निर्माण किसने किया था तथा उस दानव को कहाँ से शक्ति प्राप्त हुई ? ६६ हे प्राणेश्वर ! मेरे मन में इस प्रकार की शंका उत्पन्न होने

एहि सन्देह मनरे हेबारु मोहर ।
पचारुछि कृपा करि कह प्राणेश्वर ।। ६७ ।।
पार्वती देवींक मुखुँ एमन्त जे शुणि ।
बोइले तु धन्य धन्य पर्वत दुलणी ।। ६८ ।।
तोह तुल्य श्रोता मुहिँ देखि नहिँ जणे ।
तो मन रहिला राम चरित श्रवणे ।। ६९ ।।
गंठि कथा जाक काहुँ पचारुछु आणि ।
जाणिलि बूझि पारुछु श्रीराम काहाणी ।। ७० ।।
नोहिले एते सन्धितु भेदन्तु केमन्ते ।
कहिबि राम चरित साधु सन्धि हिते ।। ७१ ।।
पाषिए शुणि तरिबे एहि साधु ग्रन्थ ।
पाषाण्ड कर्णे बाजिले होइबे से सन्थ ।। ७२ ।।
श्रीराम किष्किन्ध्या नग्रे होइले प्रवेश ।
सुग्रीव हेला तांकर अत्यन्त विश्वास ।। ७३ ।।
दुइ जणंकर दशा हेबारु एकत्व ।
अग्नि छुइँ बेनिजन होइले मइत्र ।। ७४ ।।
मइत्र छळे बाळिकि बधिले श्रीराम ।
महाबळ बाळिर जे देखि पराक्रम ।। ७५ ।।

के कारण मैं आपसे पूछ रही हूँ। आप कृपा करके हमसे वर्णन कीजिए। ६७ देवी पार्वती के मुख से ऐसा सुनकर शंकर जी बोले, हे गिरिनन्दिनी ! तुम धन्य हो। ६८ मैंने तुम्हारे जैसा श्रोता एक भी नहीं देखा। श्रीराम-चरित्र को श्रवण करने में तुम्हारा मन स्थिर है ? ६९ कहाँ-कहाँ से मार्मिक कथाओं के विषय में तुम प्रश्न कर रही हो ? मुझे ज्ञात हो गया कि तुम श्रीराम-कथा को समझ पा रही हो। ७० नहीं तो इस प्रकार की मार्मिक कथाओं की चर्चा तुम कैसे करतीं। तुम धन्य हो ! मर्मज्ञता के कारण मैं तुमसे श्रीराम का चरित्र वर्णन करूँगा। ७१ इस सद्ग्रन्थ को सुनकर पापी व्यक्ति तर जाएँगे। पाषाण-सदृश कानों में पड़ने से वह भी साधु हो जायेगा। ७२ श्रीराम किष्किन्धानगरी में प्रविष्ट हुए। सुग्रीव उनका अत्यन्त विश्वासपात्र बन गया। ७३ दोनों व्यक्तियों की दशा एक-जैसी होने से अग्नि को छूकर दोनों व्यक्ति मित्र बन गये। ७४ मित्रता के बहाने श्रीराम ने बालि का वध कर दिया। महाबली बालि का पराक्रम देखकर, ७५

वृक्षर ओ हाड़े लुचि गुणे जोचि बाण।
टाण करि बेनिभाइ करुछन्ति रण ॥ ७६ ॥
एमन्त वेळे ओटारि बिन्धि देले कोपे।
बाळिबीर से नाराच गोटा खाइ कम्पे ॥ ७७ ॥
मुण्ड बुलाइ पड़िला लोटि भूमितळे।
श्रीरामंक मुख चाहिँ बोलइ बिकळे ॥ ७८ ॥
जाणिळि तारा तु अटु परम कल्याणी।
मना करिथिलु मोते आगरु तु जाणि ॥ ७९ ॥
न मानिलि तोर कथा मने गर्व बहि।
सत्यकथा कहि थिलु आलो तारा तुहि ॥ ८० ॥
एमन्त कहि बोइला आहे रघुनाथ।
तुम्हे जे अट अनाथ जनंकर नाथ ॥ ८१ ॥
मु हीन बानर छार जातिरेत पशु।
उद्धार करिबा नाथ जमराजा त्रासु ॥ ८२ ॥
बेसि कहिबाकु मोर प्राण कण्ठाग्रत।
एमन्ते शुणि श्रीराम होइ महाभीत ॥ ८३ ॥
बोइले बानरराज काहाकु तु डरु।
पाइबु अक्षय स्वर्ग आम्भरि कृपारु ॥ ८४ ॥

वृक्ष की आड़ में छिपकर प्रत्यञ्चा पर बाण चढ़ाया। दोनों भाई जिस समय घनघोर द्वन्द्व-युद्ध कर रहे थे। ७६ उसी समय कुपित होकर (श्रीराम ने) बालि को बेध दिया। पराक्रमी बालि उस एक ही बाण से काँपने लगा। ७७ उसका शिर चकरा गया। वह पृथ्वी पर लोट गया। वह श्रीराम के मुख की ओर ताक कर व्याकुलता से बोला। ७८ हे तारा! मैं समझ गया कि तुम अत्यन्त कल्याण साधिका हो। पूर्व से ही ज्ञात होने के कारण तुमने मुझे मना किया था। ७९ मैंने अपने मानसिक अहंकार के कारण तुम्हारी बात नहीं मानी। ८० इस प्रकार कहते हुए वह बोला, हे रघुनाथ! तुम तो अनाथ लोगों के स्वामी हो। ८१ मैं निम्नकोटि का तुच्छ वानर हूँ तथा जाति में भी पशु हूँ। हे नाथ! यमराज के भय से मेरा उद्धार कर दीजिएगा। ८२ मेरे प्राण कण्ठगत हो गये हैं। मैं अधिक कहने में असमर्थ हूँ। ऐसा सुनकर श्रीराम अत्यन्त भयभीत होकर बोले, हे वानरराज! तुम किससे डर रहे हो? मेरी दया से तुम अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति करोगे। ८३-८४ यह कहते

एहा कहि बाळि देहे बुलाइले कर ।
बिमाने घेनि मिळिले आकाशे अमर ॥ ८५ ॥
बाळिर भारिजा जेहु तारा महासती ।
अन्तःपुररु अइला शुणि से तड़ति ॥ ८६ ॥
देखिला पड़िछि स्वामी धूळिर उपरे ।
राम लक्ष्मण सुग्रीव अछन्ति पाखरे ॥ ८७ ॥
सुग्रीव आउँसि देउअछि बाळिपाद ।
शिर आउँसि दिअन्ति प्रभु रामचन्द्र ॥ ८८ ॥
शइल फूटि जे सने बहि जाए नई ।
तेसन रुधिरधारा हृदरु बहइ ॥ ८९ ॥
देखिण रमणीमणि शिरे कर ताड़ि ।
बोइला राघव तुम्भे राज्य बाड़ि छाड़ि ॥ ९० ॥
मोते राण्ड करिबाकु आसिथिल एथे ।
अनाथ नाथ बोलन्ति तुम्भंकु केमन्ते ॥ ९१ ॥
मुहिँ त निर्दोषी मोर स्वामी त निर्दोषी ।
माइल किम्पाइँ वृक्षमूळे लुचि बसि ॥ ९२ ॥
जाहिँ पाइँ माइल हे रघुकुळ बर ।
ताहार उपरे पड़ु निश्वास मोहर ॥ ९३ ॥

हुए श्रीराम ने बालि के शरीर पर हाथ फिराया। देवगण बिमान लेकर आकाश में आ गये। ८५ महासती तारा, जो बालि की पत्नी थी, सब सुनकर शीघ्र ही अन्तःपुर से आ गयी। ८६ उसने (अपने) स्वामी को धूल में पड़े देखा। उसके निकट ही श्रीराम, लक्ष्मण तथा सुग्रीव उपस्थित थे। ८७ सुग्रीव बालि के पैर सहला रहा था तथा प्रभु रामचन्द्र उसका शिर सहला रहे थे। ८८ जिस प्रकार पर्वत फोड़ कर नदी बहती है, वैसे ही (बालि के) हृदय से रक्त की धार बह रही थी। ८९ रमणी शिरोमणि (तारा ने) यह देखकर हाथों से शिर कूटते हुए कहा, हे राघव ! तुम राजमहल छोड़कर हमें विधवा बना देने के लिए यहाँ आये थे। तुम्हें अनाथों का नाथ कैसे कहा जाता है ? ९०-९१ मैं और मेरे स्वामी तो निर्दोषी थे। वृक्ष की आड़ में छिपकर (बैठकर) तुमने उन्हें क्यों मार डाला ? ९२ हे रघुकुलश्रेष्ठ ! जिसके लिए तुमने उसका वध किया है, उसे मेरी आह लग जाय। ९३

ताकु तुम्भे भोग करि न पारि हे राम ।
मुहिँ जेबे सती मोर कथा नोहु आन ॥ ९४ ॥
एमन्ते शाप दिअन्ते तारा महादेइ ।
व्याकुळ हेले ता शुणि रघुकुळ साइँ ॥ ९५ ॥
बोइले न बूझि कोप न कर सुन्दरी ।
आम्भे संसार अहित न करु काहारि ॥ ९६ ॥
तोहर स्वामी कलु पशु जन्मु पार ।
आम्भर हस्तेसे मरि पाइला उद्धार ॥ ९७ ॥
बहुत काळ बञ्चि से पालिलाक महीं ।
अवश्य दिने मरन्ता न पाआन्ता त्राहि ॥ ९८ ॥
जमर दाढ़रु केहि न जाइ उबुरि ।
स्वर्गरे सुखे बसिला आम्भ हस्ते मरि ॥ ९९ ॥
न बूझि कथार सन्धि करुअछु कोप ।
बिधबा नोहिबु देखि तु आम्भर रूप ॥ १०० ॥
महासती बोलाइबु आम्भर बचन ।
आम्भंकु तु शाप किम्पा देउ अकारण ॥ १०१ ॥
जेबे शाप देलु सती कह प्रतिकार ।
जेउँ मुखे उद्‌गारइ बिष अहिबर ॥ १०२ ॥

हे राम ! तुम उसका उपभोग न कर सको। यदि मैं सती होऊँ तो मेरी बात खाली न जाय। ९४ महादेवी तारा को इस प्रकार शाप देते हुए सुनकर, रघुकुल के स्वामी श्रीराम व्याकुल हो गये। ९५ उन्होंने कहा, हे सुन्दरी ! बिना समझे-बूझे क्रुद्ध न हो। हम संसार में किसी का भी अहित नहीं करते हैं। ९६ तुम्हारे स्वामी को मैंने पशुजीवन से मुक्ति दिला दी। मेरे हाथों से प्राण त्याग कर वह उद्धार हो गया। ९७ उसने चिरकाल तक अवस्थित रहकर पृथ्वी का पालन किया। वह अवश्य ही एक दिन मरता। इससे उसे त्राण नहीं मिल सकता था। ९८ काल की दाढ़ से कोई भी नहीं बच पाता। हमारे हाथों से मरकर वह सुखपूर्वक स्वर्ग में विराजमान है। ९९ मेरी बातों का मर्म न समझकर क्रोध कर रही हो। हमारा रूप देखने के पश्चात् तुम विधवा नहीं होगी। १०० मेरे कथनानुसार तुम महासती कहलाओगी। तुम बिना कारण ही मुझे शाप क्यों दे रही हो ? १०१ हे सती ! जब तुमने शाप दे ही दिया तो उसका निराकरण भी बताओ। सर्पराज जिस मुख से विष वमन करता है। १०२ वह उसी मुख से जहर हरण भी

से जेसने से मुखरे बिष निए हरि ।
तुहि मोहर शापकु निअ सेहि परि ।। १०३ ।।
आम्भर बोले जे तोते सुमरिबप्राते ।
ताहार आपदमान खण्डिबु किंचिते ।। १०४ ।।
बिधबा नोहि सधबा हेबु तु गो सती ।
अष्ट अळंकार तोर थिब सेहि मति ।। १०५ ।।
तुहि राणी हेबु राजा हेब तो दिअर ।
जुबराज होइब तो अंगदकुमर ।। १०६ ।।
राज्य पाळिब से तुम्भे दुहेँ थिब सुखे ।
प्रभु मुखरु मन्त शुणि तारा दुःखे ।। १०७ ।।
बोइला भो प्रभु मुहिँ कहि गलि जाहा ।
तुहि कि आन करिबु कह प्रभु ताहा ।। १०८ ।।
अवश्य पाइबु तुहि सीता ठाकुराणी ।
किछि दिवस तु भोग करिबु ता पुणि ।। १०९ ।।
अवश्य तार तोहर होइब बिच्छेद ।
परमानन्द पुरुष तोर कि बिषाद ।। ११० ।।
एमन्त शुणि आनन्द हेले रघुमणि ।
भांगि न पारिले सती शापकु से पुणि ।। १११ ।।

कर लेता है। तुम भी उसी प्रकार से मेरे शाप को ले लो। १०३ हमारे कहने से जो भी प्रातःकाल तुम्हारा स्मरण करे उसकी बहुत कुछ आपदाएँ नष्ट कर देना। १०४ हे सती ! तुम बिधवा न होकर सधवा रहोगी। तुम्हारे अष्टाभरण पूर्ववत् ही रहेंगे। १०५ तुम रानी होगी और तुम्हारा देवर राजा बनेगा। तुम्हारा पुत्र अंगद युवराज बनेगा। १०६ वह राज्यकाज को सम्हालेगा और तुम दोनों सुखी रहोगे। भगवान श्रीराम के मुख से इस प्रकार सुनकर तारा दुःखित हो गयी। १०७ वह बोली, हे प्रभु ! मैं जो भी कह गयी, हे नाथ ! कहिए, क्या आप उसे अन्यथा कर देंगे ? १०८ सीतादेवी को आप अवश्य ही प्राप्त करेंगे। फिर कुछ दिनों तक आप उनका उपभोग करेंगे। १०९ फिर निश्चित ही तुम्हारा उनसे वियोग होगा और तुम तो परमानन्द पुरुष हो, तुम्हें विषाद कैसा ? ११० इस प्रकार सुनकर रघुवंशमणि श्रीराम प्रसन्न हो गये। वह सती के शाप को तोड़ नहीं सके। १११ हे हिमाञ्चलकुमारी ! इसी कारण से उन्हें यह दण्ड

तेणु ए दण्ड पाइले जाण हैमवती ।
आबर पूर्वरे शाप देइ थिले सती ।। ११२ ।।
सेहि शापे बाळकालु पाइले से कष्ट ।
तांक भारिजाकु हरि नेला सेहि दुष्ट ।। ११३ ।।
पार्वती कहिले ताहा कह मोर आगे ।
श्री विष्णुंकु शाप देला सती केउँ बागे ।। ११४ ।।
कि नाम ताहार सेहि काहार घरणी ।
जगतनाथंकु शाप देला से तरुणी ।। ११५ ।।
एड़े बड़ कथा हेला नाहिँ पुणि भय ।
ताकु एड़ि न पारिले से देवाधिराय ।। ११६ ।।
ए बड़ बिचित्र कथा कहिबा बुझाइ ।
एमन्त शुणि बोइले हसि उमासाइँ ।। ११७ ।।
सती कन्या ठारु बड़ नाहिँ केहि जाण ।
पुरुष मध्ये जेमन्ते गरिष्ठ ब्राह्मण ।। ११८ ।।
देवंक मध्ये जेसने श्री हरिटि बड़ ।
पक्षींक मध्ये जेसने अटइ गरुड़ ।। ११९ ।।
भकत मध्ये जेसने प्रह्लाद असुर ।
बडष्णव मध्ये जेन्हे बिभीषण बीर ।। १२० ।।
ऋषिक मध्ये जेसने अटइ नारद ।
मंत्रींक मध्ये प्रणव ता मध्यरे नाद ।। १२१ ।।

प्राप्त हुआ । फिर पूर्वकाल में भी सती शाप दे चुकी थी । ११२ उस शाप के कारण उन्हें बाल्यावस्था से ही कष्ट प्राप्त होते रहे । उसी दुष्ट ने उनकी स्त्री का हरण कर लिया था । ११३ पार्वती ने कहा कि विष्णु को किस कारण से सती ने शाप दिया ? वह सब आप हमारे समक्ष वर्णन करें । ११४ उसका नाम क्या था ? वह किसकी पत्नी थी, जिस तरुणी ने जगत के नाथ को शाप दे डाला ? ११५ इतनी बड़ी बात पर भी भय नहीं हुआ और देवाधिराज विष्णु भी उसे टाल न सके । ११६ यह बड़ी विचित्र बात है । आप हमसे समझाकर कहें । ऐसा सुनकर उमानाथ हँसते हुए कहने लगे । ११७ सती कन्या से बढ़कर कोई भी नहीं है । तुम ऐसा समझ लो । पुरुषों में जैसे ब्राह्मण श्रेष्ठ होता है । ११८ देवताओं में जिस प्रकार विष्णु बड़े हैं तथा पक्षियों में गरुड़ बड़ा है । ११९ भक्तों के मध्य जैसे दैत्य प्रह्लाद तथा वैष्णवों में जिस प्रकार पराक्रमी विभीषण है । १२० ऋषियों में

जोगींक मध्ये जेसने आम्भे अटुँ बड़ ।
नामंक मध्ये जेसने राम नाम दृढ़ ।। १२२ ।।
क्षीरंक मध्ये जेसने अटइ गोरस ।
ऋतु मध्यरे बसंत जेसने सरस ।। १२३ ।।
रस मध्यरे जेसने भूमि रस सार ।
तेसने सती बचन अटे निराधार ।। १२४ ।।
ताहा मेण्टि न पारिबे तिनि पुरे केहि ।
सत्यजुगर हे कथा कहुअछि मुहिँ ।। १२५ ।।
जळन्धर नामे थिला एकइ असुर ।
सागर सुत से पुणि बळे बळीयार ।। १२६ ।।
ताहार भारिजा नाम अटे बृन्दावती ।
असुर दुहिता सेहि सुन्दरी जुबती ।। १२७ ।।
ता समान पतिव्रता नाहिँ तिनिपुरे ।
तार धर्मे जळन्धर पशि स्वर्गपुरे ।। १२८ ।।
देवता मानंकु आणि खटाइला पादे ।
देवंक चिन्ता लागिला नारायण हृदे ।। १२९ ।।
गरुड़ चढ़ि ता संगे कले आसि रण ।
न पारिले असुरर संगे नारायण ।। १३० ।।

जैसे नारद तथा मंत्रों में प्रणव (ॐकार) और उसमें भी नाद श्रेष्ठ है । १२१ योगियों में जिस प्रकार मैं श्रेष्ठ हूँ तथा नामों के बीच जैसे राम नाम श्रेष्ठ है । १२२ क्षीर में जिस प्रकार गो-दुग्ध है तथा ऋतुओं के मध्य जैसे बसंत ऋतु सरस है । १२३ रसों के बीच जैसे भूमि-रस ही सार है । उसी प्रकार सती का वाक्य सुदृढ़ अर्थात् सत्य रहता है । १२४ तीनों लोकों में कोई भी उसे मिटा नहीं सकता । मैं यह सतयुग की कथा कह रहा हूँ । १२५ जलन्धर नाम का एक दैत्य था । वह समुद्र का पुत्र तथा बल में महान पराक्रमी था । १२६ उसकी पत्नी का नाम वृन्दावती था । वह सुन्दर युवती असुर-कन्या थी । १२७ तीनों लोकों में उसके समान पतिव्रता नहीं थी । उसी के धर्म के कारण जलन्धर ने स्वर्गलोक में घुसकर देवताओं को लाकर उन्हें अपने चरणों का दास बना लिया था । देवताओं के कारण यह चिन्ता नारायण के हृदय में व्याप्त हो गयी । १२८-१२९ गरुड़ पर चढ़ करके आकर उन्होंने उसके साथ संग्राम किया । परन्तु नारायण असुर को परास्त नहीं कर

ता संगे बन्धु बान्धिले जहुँ गले हारि ।
बोइले तु आम्भ शळा अटु दण्डधारी ।। १३१ ।।
लक्ष्मी तोहर भउणी तु ताहार भाइ ।
सागर गभु उपुजि अछ तुम्भे दुइ ।। १३२ ।।
न जाणिबा पणे कळि कले सिना आम्भे ।
असुर बोइला बन्धु हेल जेबे तुम्भे ।। १३३ ।।
भउणीकि घेनि आसि रह आम्भ घरे ।
डरे लक्ष्मी नारायण रहिले ता घरे ।। १३४ ।।
नारद मुख तुम्भर रूप गुण शुणि ।
तुम्भंकु नेबा निमन्ते बिचारिला पुणि ।। १३५ ।।
दूत बर गिला आम्भपुरे से असुर ।
आम्भे नास्ति करिबारु कला से समर ।। १३६ ।।
तार पत्नी पतिब्रता धर्म रखि बारु ।
आम्भे ताहाकु समरे जिणि जे न पारु ।। १३७ ।।
आम्भ निमन्ते श्रीविष्णु माया भिआइले ।
दानवर मुण्डनेइ ता आगरे देले ।। १३८ ।।
पतिमुण्ड देखि सती कान्दिला बहुत ।
संन्यासी बेशे मिळिले पुणि से अच्युत ।। १३९ ।।

पाये । १३० जब वह हार गये, तब उन्होंने उसके साथ मित्रता स्थापित की । उन्होंने कहा, हे राजन् ! तुम तो हमारे साले हो । १३१ लक्ष्मी तुम्हारी बहन है और तुम उसके भाई हो । तुम दोनों ही समुद्र के गर्भ से उत्पन्न हुए हो । १३२ न जानने के कारण ही हम दोनों आपस में झगड़ा करते रहे । तब असुर बोला, जब तुम हमारे सम्बन्धी ही हो गये तो बहन को लेकर हमारे घर आकर रहो । भय के कारण लक्ष्मी और नारायण उसके घर में रह गये । १३३-१३४ हे पार्वती ! नारद के मुख से तुम्हारे रूप और गुणों की चर्चा सुनकर वह तुम्हें प्राप्त करने के लिए विचार करने लगा । १३५ उस राक्षस ने हमारे पास दूत भेजा, फिर हमें नष्ट करने के लिए उसने युद्ध किया । १३६ उसकी पत्नी के पातिव्रत धर्म के कारण हम उसे युद्ध में जीत नहीं पाये । १३७ तब हमारे लिए विष्णु ने लीला रची । उन्होंने दानव का माया-मुण्ड लेकर उसकी पत्नी को दे दिया । १३८ पति का शिर देखकर सती बहुत क्रन्दन करने लगी । तब अच्युत भगवान नारायण संन्यासी के वेष में वहाँ आ पहुँचे । १३९

बोइले तोर पतिकि बञ्चाइण देबा ।
चक्षु बूजिले सिना तो स्वामी की पाइबा ।। १४० ।।
मायाधर मायारे से होइछि मोहिता ।
जातिरे अबळा पुणि असुर दुहिता ।। १४१ ।।
जाहार माया आम्भंकु अटे अगोचर ।
काहुँ जाणिब जुबती बुद्धि केते तार ।। १४२ ।।
चक्षु बुजन्ते ता आगे देव नारायण ।
असुर स्वरूपे बिजे कले ततक्षण ।। १४३ ।।
बृन्दावती स्वामीकि जे कला जाइँ कोळ ।
बोइला भो नाथ किम्पाँ बहुअछि झाळ ।। १४४ ।।
संग्राम न कर चाल जिबा आम्भे घरे ।
लक्ष्मी ठाकुराणी अछि आम्भर मन्दिरे ।। १४५ ।।
ता ठारु सुन्दरी अछि आन नहिँ पुणि ।
तिनि पुर मोहिनी से विष्णु पाटराणी ।। १४६ ।।
जोगीर भारिजा सेहि छाड़ ताकु नाथ ।
एमन्त शुणि बोइले धीरे जगन्नाथ ।। १४७ ।।
आगो सखी कि कहिबि मुँ ताहार रूप ।
जुद्ध करु थिलि तहुँ धरि माया रूप ।। १४८ ।।

उन्होंने कहा कि मैं तुम्हारे पति को जीवित कर दूंगा। तुम आँख बन्द करो, तुम्हारा स्वामी तुम्हें प्राप्त हो जाएगा। १४० वह असुर-बाला अबला तो थी ही, मायापति की माया से मोहित हो गयी। १४१ जिसकी माया हमारे लिए भी अगोचर है, उसे वह युवती कैसे समझ पाती। उसमें बुद्धि ही कितनी थी। १४२ उसके आँखें बन्द कर लेने पर भगवान नारायण उसी क्षण असुर का रूप धारण करके उपस्थित हो गये। १४३ वृन्दावती ने बढ़कर (माया-रूपधारी) अपने स्वामी को अंक में भर लिया और बोली, हे नाथ! इतना पसीना आपके क्यों बह रहा है? १४४ अब युद्ध न करो। चलो हम लोग घर चलें। लक्ष्मीदेवी अपने घर पर हैं। १४५ फिर उसके समान सौन्दर्ययुक्त, रूपसी अन्य कोई नहीं है। वह विष्णु की पटरानी है तथा तीनों लोकों को मोहित करनेवाली है। १४६ हे नाथ! वह तो योगी की स्त्री है, उसे छोड़ो। इस प्रकार सुनकर (असुर-रूपधारी) जगत के नाथ ने धीरे से कहा। १४७ अरी सहचरी! मैं उसके रूप के विषय में क्या कहूँ? मैं मायावी रूप धारण करके वहाँ युद्ध कर रहा था। १४८ मैं शंकर

शंकर बेशे ता पाशे होइलि प्रवेश ।
देखि मोहित होइलि उड़िला साहस ॥ १४९ ॥
त्रिभुवन मोहिनी से सुन्दरू सुन्दर ।
ताहाकु लक्ष देबाकु नाहिँ तिनि पुर ॥ १५० ॥
ता ठारु सुन्दरी नारी नाहिँ तिनिपुरे ।
स्वर्गर सुन्दरी शची खटे ता पयरे ॥ १५१ ॥
बड़ सुन्दरी बोइला रम्भा अपसरा ।
उर्वशी अटइ शोभा लक्ष्मीर पसरा ॥ १५२ ॥
भोर बड़ भउणी जे बिष्णु पाटराणी ।
एमाने नो हिबे पाद अंगुळि कि सरि ॥ १५३ ॥
काहिँ नाहिँ नाहिँ सखी तिनिपुरे नाहिँ ।
चतुर्दश ब्रह्माण्डरे ठाकुराणी सेहि ॥ १५४ ॥
तार रूपकु अनाइँ गलि मुहिँ मुर्छा ।
मोर माया बुझि पारि देला अंग लुचा ॥ १५५ ॥
बिजुळि जेन्हे झटकि लुचिजाइ मेघे ।
तेसने गला मो आगु से सुन्दरी बेगे ॥ १५६ ॥
तेते बेलु मोर अंग होइला अस्थिर ।
घरे खोजिलि मु तोते न पाइ सत्वर ॥ १५७ ॥

का रूप धारण करके उसके निकट पहुँचा। उसे देखकर मैं मोहित हो गया। मेरा साहस उड़ गया। १४९ वह सुन्दर से भी सुन्दर तथा तीनो लोकों को मोहित करनेवाली थी। उसकी समता करनेवाला त्रिभुवन में कोई नहीं है। १५० उससे अधिक सुन्दर नारी तीनों लोकों में नहीं है। स्वर्गलोक की सुन्दरी शची तो उसके चरणों की दासी है। १५१ रम्भा अप्सरा बड़ी सुन्दर कही जाती है। उर्वशी भी शोभा की खान है। मेरी बड़ी बहन जो विष्णु की पटरानी है। यह सभी उसके पैर की उँगली के समान भी नहीं हैं। १५२-१५३ हे सखी! तीनों लोकों में कहीं भी (उसके समान) कोई नहीं है। चौदह भुवनों की वही देवी है। १५४ उसके रूप को देखकर मैं मूर्च्छित हो गया। मेरी माया को समझकर उसने अपना अंग छिपा लिया। १५५ जिस प्रकार चमककर बिजली बादलों में छिप जाती है। उसी प्रकार वह सुन्दरी मेरे आगे से शीघ्रता के साथ हट गई। १५६ उस समय मेरा अंग अस्थिर हो गया। मैंने शीघ्रता से तुम्हें घर में ढूँढ़ा पर तुम न मिलीं। १५७ दासी के मुख से सुनकर मैं यहाँ दौड़ा आया। स्वामी

दासींक मुखरु शुणि अइलइँ धाइँ ।
स्वामीर एसन वाक्ये सती प्रते जाइ ।। १५८ ।।
देह देला पतिव्रता धर्म गला नाश ।
असुर प्राण मो बाणे गला जमपाश ।। १५९ ।।
जाणि नारायण निज रूपे देले देखा ।
सती से रूपकु देखि हेला चित्ररेखा ।। १६० ।।
किंचित काल निर्जीव होइ बोले कोपे ।
घोर दुःख पाइबुतु ए मोहर शापे ।। १६१ ।।
मुहिँ जेवे सती मोर कथा नोहु आन ।
तोर भारिजाकु करु असुर हरण ।। १६२ ।।
तु जेमन्ते मायाकरि कलु मोते नष्ट ।
तेसने माया करन्तु तोते सेहि दुष्ट ।। १६३ ।।
जेसन कपि हस्तरे देखाइलु शिर ।
जोगी बेशरे हरिलु चित्तकु मोहर ।। १६४ ।।
जेमन्ते कष्ट देइ तु बुलाइलु बने ।
तेसने कष्ट पाइबु निबिड़ कानने ।। १६५ ।।
जोगी बेशे तोर दिन जाउथिब पुणि ।
माया तोते घोटिथिब काळ रात्रि जाणि ।। १६६ ।।

के इन वचनों से सती रत हो गई । १५८ शरीर का दान करने से पातिव्रत-धर्म नष्ट हो गया तथा मेरे बाण से असुर के प्राण यमलोक को चले गये । १५९ यह जानकर नारायण ने उसे अपने रूप का दर्शन कराया । वह रूप देखते ही सती चित्रांकित रेखा के समान (निश्चल) रह गयी । १६० कुछ समय तक निर्जीव के समान रह गयी और फिर कुपित होकर (बृन्दा) बोली कि तुम हमारे इस शाप से अत्यन्त कष्ट पाओगे । १६१ मैं यदि सती होऊँ तो मेरी बात मिथ्या न हो और तुम्हारी भार्या का हरण असुर कर ले । १६२ तुमने जिस तरह से छल करके मुझे नष्ट किया है अर्थात् मेरा पातिव्रत-धर्म नाश कर डाला है, उसी प्रकार वह दुष्ट भी तुम्हारे साथ छल करे । १६३ जिस प्रकार मायावी हाथों से तुमने मुझे शिर दिखाया और साधु के वेश में मेरे मन को मोहित कर लिया । १६४ जिस प्रकार तुमने दुःख देकर मुझे वन में बुलाया, उसी प्रकार गहन कानन में तुम कष्ट को प्राप्त करो । १६५ तुम्हारा समय साधुवेश में ही व्यतीत हो । कालरात्रि के समान माया तुम्हें निगल जाय । १६६ तुम्हारी पत्नी को राक्षस छल से हर ले तथा

असुरे मायारे हरि नेबे तो भारिजा ।
लोके पाइबु मो परि तुहि लोक लज्जा ।। १६७ ।।
एमन्त कहि से सती कोपे प्रज्वळित ।
नयनरु कोपे अग्नि हेला तार जात ।। १६८ ।।
से अनळे तार देह पकाइला दहि ।
श्रीहरि ताहार भस्म अंगे बोळि होइ ।। १६९ ।।
तुळसी रूपे ताहाकु कले गळामाळा ।
मेण्टि न पारिले सती शापे हेले कळा ।। १७० ।।
शुणिलु त हैमवन्त दुलणी गो तुहि ।
ए सन्धि कथा कहिलि तो आगरे मुहिँ ।। १७१ ।।
बहुत काळ पुरुणा कथा गोटि तोते ।
बुझाइ करि कहिलि गलु कि परते ।। १७२ ।।
हिमबन्त दुलणी जे साक्षाते हिंगुळा ।
काकटपुरे* रहिले होइण मंगळा ।। १७३ ।।
काळिका रूपे रहिले काळी मण्डपरे ।
चण्डी चामुण्डा रूपरे भ्रमन्ति ग्रामरे ।। १७४ ।।
जगत जन जननी भवानी चरण ।
दीन चक्रधर डरे पशइ शरण ।। १७५ ।।

मेरे ही समान तुम्हें लोकलज्जा प्राप्त हो । १६७ इस प्रकार भय से प्रज्वलित सती के नेत्रों से अग्नि उत्पन्न हो गयी । १६८ उस आग ने उसकी देह को जलाकर भस्म कर डाला । श्री नारायण ने उसकी भस्म अपने शरीर में मल ली । १६९ तुलसी के रूप में उसे अपने कण्ठ का हार बना लिया । वह सती के शाप को मिटा नहीं सके और काले हो गये । १७० हे हिमांचलकुमारी ! यह मार्मिक कथा हमने तुम्हारे सामने कही । उसे तुमने सुना । १७१ यह एक बहुत ही प्राचीन उपाख्यान हमने तुमसे समझाकर कहा । क्या तुम्हारी समझ में आया ? १७२ हे हिमालयतनया ! तुम साक्षात् हिंगुला हो । तुमने मंगला बनकर काकटपुर* में निवास किया है । १७३ कालिका के रूप में तुम काली-मण्डप में विराजमान हो । चण्डी-चामुण्डा के रूप में ग्रामों में भ्रमण करनेवाली हो । १७४ जगज्जननी भवानी के चरणों में दीन चक्रधर भयभीत होकर शरण के हेतु आया है । १७५

* उड़ीसा में काकटपुर नामक स्थान पर मंगला देवी का प्रसिद्ध मंदिर है ।

महिषासुर, रक्तबीर्ज, शुम्भ, निशुम्भ ओ दुर्गम असुर बध एवं कात्यायनी, कौशिकी ओ दुर्गा जन्म

एथु अनन्तरे पुणि कहन्ति शंकर।
ए बिलंका रामायण सुकृत भण्डार ॥ १ ॥
जे शुणइ शुणाइ से धन्य ए संसारे।
उत्तरकाण्ड चरित सार ता मध्यरे ॥ २ ॥
सामवेद से उकत होइछि ए ग्रन्थ।
सात काण्ड रामायण शुणि अछु तुत ॥ ३ ॥
बिचित्र कथा गोटाए शुणाउछि तोते।
बिलंका काण्ड चरित अपूर्व जे ग्रन्थे ॥ ४ ॥
बिलंका उत्तरकाण्ड अपूर्व जे बाणी।
भवसागरु तरिबे शुणि पुणि प्राणी ॥ ५ ॥
पाप तमराशिकि ए जाण मारतण्ड।
बिलंका रामायणर ए उत्तरकाण्ड ॥ ६ ॥
सन्धि कथा मान रहि अछइ एथिरे।
मन देइ शुण कहुअछि तो आगरे ॥ ७ ॥
अति पुरातन कथा देव जुग आद्ये।
ब्रह्मा बेद रूपे थिले श्री बिष्णुर हृदे ॥ ८ ॥

महिषासुर, रक्तबीर्य, शुम्भ-निशुम्भ तथा दुर्गम असुर-वध एवं कात्यायिनी, कौशिकी और दुर्गा का जन्म

इसके अनन्तर शंकर जी बोले, यह बिलंका रामायण पुण्यों का भंडार है। १ जो इसे सुनता और सुनाता है, इस संसार में वह धन्य है। उसमें उत्तरकाण्ड तो उसका सार ही है। २ उक्त ग्रन्थ सामवेद से निकाला गया है। तुमने तो सातों काण्ड रामायण श्रवण की है। ३ अब तुम्हें एक अद्भुत कथा सुना रहा हूँ। बिलंका रामायण ग्रन्थ में बिलंका का चरित्र अपूर्व है। ४ फिर उसका उत्तरकाण्ड जो भी प्राणी श्रवण करेगा, वह भवसागर से पार हो जायेगा। ५ पापान्धकार पुंज के लिए यह बिलंका रामायण का उत्तरकाण्ड भास्कर के समान है। ६ इसमें विविध मार्मिक प्रसंग हैं। मैं तुम्हारे समक्ष वर्णन कर रहा हूँ। तुम ध्यान लगाकर सुनो। ७ यह देवयुग की अत्यन्त प्राचीन कथा है। उस समय ब्रह्मा जी वेद के रूप

सृष्टि आचरे से नाभि पद्मु हेले जात ।
पद्मयोनि ब्रह्मा नामे होइले उदित ।। ९ ।।
ताहांक पुत्र कश्यप नामे एक ऋषि ।
तांक भारिजा सुन्दरी दनु शुभ्रकेशी ।। १० ।।
भाद्रवमास शुक्लपक्ष नवमीरे ।
कृत्तिका नक्षत्र चन्द्र वृषभ राशिरे ।। ११ ।।
मंगळबार से दिन व्यतिपात जोग ।
सिंह संकरान्तिरु जे दश दिन भोग ।। १२ ।।
गर नामे करण जे राति दुइ घड़ि ।
स्वामी संग कला बाजी धर्म कर्म छाडि ।। १३ ।।
अशुभ जोगे जनम हेबारु से पुत्रे ।
दुष्टपणे जात कले देवंक सहिते ।। १४ ।।
ताहांक बंशरे जात हेले दुइ भाइ ।
रम्भ करम्भ नामरे उदित से होइ ।। १५ ।।
अपुत्रिक होइ दुहेँ करुथिले तप ।
जळ मध्यरे करम्भ नामे कउणप ।। १६ ।।
घोर तप करुथिला इन्द्र ताहा जाणि ।
कपटे ग्राह रूपरे नेले ताकु टाणि ।। १७ ।।

---

८ श्री विष्णु भगवान के हृदय में थे । ८ सृष्टि के प्रारम्भ में विष्णु भगवान के नाभि-कमल से ब्रह्मा जी प्रकट हुए । पद्मयोनि ब्रह्मा के नाम से विख्यात हुए । ९ उनके कश्यप ऋषि नामक एक पुत्र थे । उनकी शुभ्रकेशी भार्या का नाम दनु था । १० भाद्र मास के शुक्लपक्ष की नवमी में कृत्तिका नक्षत्र था तथा चन्द्रमा वृष राशि में अवस्थित था । ११ वह मंगल का दिन था । उस व्यतीपात योग युक्त सिंह संक्रान्ति से दसवें दिन, रात्रि दो घड़ी तक गरनाम करण योग में दनु ने धर्म कर्म का त्याग करके अपने पति से समागम किया । १२-१३ उस अशुभ योग में उससे एक पुत्र का जन्म हुआ, जिसने देवताओं के साथ दुष्टता करना प्रारम्भ कर दिया । १४ उसके वंश में दो भाई उत्पन्न हुए, जिनका नाम रम्भ तथा करम्भ था । १५ उनके पुत्र न होने के कारण दोनों ने तपस्या प्रारम्भ कर दी । करम्भ नामक दैत्य को जल के बीच घोर तपस्या करते हुए देखकर इन्द्र सब समझ गये । उन्होंने माया से ग्राह का रूप धारण करके उसे खींच लिया । १६-१७ फिर

जळे बुड़ाइ ताहार हरि नेले प्राण ।
ताहार पाप पुण्यकु बुझि जन्तुराण ।। १८ ।।
मइँषि जन्म ताहाकु देले पुणि नेइ ।
एथु अनन्तरे कथा शुण मन देइ ।। १९ ।।
रम्भ दानव अनळ सेवि घोर तपे ।
प्रसन्ने अग्नि दर्शन देले द्विज रूपे ।। २० ।।
बोइले कि बरे इच्छा अछइ तोहर ।
दानव बोइला नाहिँ मोहर कुमर ।। २१ ।।
पुत्रेक देबु से हेब महाबळबन्त ।
पुरुष हस्ते अमर हेब सेहि पुत्र ।। २२ ।।
अस्त्र शस्त्र न भेदिब शरीरे ताहार ।
काम रूपी होइब जे मोहर कुमर ।। २३ ।।
मो बंश पुरुष हाते न मरिबे केभे ।
देबे दानबे मानबे अबध्य होइबे ।। २४ ।।
एमन्ते बर मागन्ते स्वाहा देबी नाहा ।
बोइले पुत्र निमन्ते हुअ जाइँ बेहा ।। २५ ।।
बळे काहारिकि बिभा होइ न पारिबु ।
जे तोते भजिब ताकु तु बिभा होइबु ।। २६ ।।

पानी में डुबाकर उसके प्राण हर लिये। उसके पाप और पुण्य की विवेचना करके धर्मराज ने पुनः उसे भैंस का जन्म दिया। इसके बाद की कथा मन लगाकर सुनो। १८-१९ अग्नि की सेवा करके घोर तप करते हुए रम्भ दैत्य को अग्निदेव ने प्रसन्न होकर ब्राह्मण के वेश में दर्शन देकर कहा कि तुम्हें किस वर की कामना है ? दानव बोला कि मेरे पुत्र नहीं है। २०-२१ हमें एक पुत्र प्रदान करें जो अत्यन्त बलवान हो तथा वह पुरुष के हाथों से अवध्य हो। २२ उसका शरीर अस्त्र-शस्त्र से अभेद्य हो तथा मेरा वह पुत्र इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला हो। २३ मेरे वंश का विनाश कभी भी किसी पुरुष के हाथ से न हो तथा देवता, दानव और मानव से अवध्य हो। २४ इस प्रकार का वर माँगने पर स्वाहा देवी के स्वामी (अग्निदेव) ने कहा कि तुम पुत्र के हेतु जाकर विवाह करो। २५ बलपूर्वक तुम किसी से विवाह नहीं करोगे। जो तुम्हें प्यार करे उसी से विवाह करना। २६ चार योनियों में से जो भी तुम्हें प्यार

चारि खानिक मध्यरु जे भजिब तोते ।
तु ताहाकु बिभा हेबु पुत्रर निमन्ते ।। २७ ।।
एमन्त कहि अनळ गले अन्तर्धाने ।
रम्भ असुर बुळिला जाइँ त्रिभुवने ।। २८ ।।
केहि जे ताहाकु बिभा नोहिलेक पुणि ।
बन कन्दर भ्रमइ से दानव मणि ।। २९ ।।
करम्भ मइँषि होइ बुलुथिला बने ।
तप धर्मे बळे पूर्व कथा भाळि मने ।। ३० ।।
बिचारिला इन्द्र मोर अटइ बइरि ।
भारिजा हेबि इच्छारे एहाकु मुँ बरि ।। ३१ ।।
जेबण पुत्र जनम हेब आम्भठारु ।
अग्नि बरे बळबन्त पणे हेब मेरु ।। ३२ ।।
एमन्त बिचारि आसि बरिला ताहाकु ।
रम्भ जे बिभा होइला न कहि काहाकु ।। ३३ ।।
दश मास अन्ते तार पुत्र हेला जात ।
पापी बोलि न छुइँले तार कुळ गोत्र ।। ३४ ।।
पशु हरण दोषरे दोषी ताकु कले ।
मार मार करि पुरु बाहुड़ाइ देले ।। ३५ ।।

करे, तुम उसी से पुत्र के लिए विवाह कर लेना । २७ इस प्रकार कहकर अग्निदेव अन्तर्धान हो गये तथा रम्भ दैत्य तीनों लोकों में जाकर भ्रमण करने लगा । २८ उसने किसी से विवाह नहीं किया । वह दानवश्रेष्ठ वन एवं कन्दराओं में घूमता रहा । २९ करम्भ भैंस बनकर जंगल में विचरण कर रहा था । तपस्या के धर्म-बल के कारण पूर्वजन्म की घटना स्मरण करते हुए उसने अपने मन में विचार किया कि इन्द्र मेरा शत्रु है । मैं अपनी इच्छानुसार वरण करके इसकी पत्नी बन जाऊँ । ३०-३१ हम दोनों से जो भी पुत्र उत्पन्न होगा वह अग्निदेव के वर के कारण बल-वीर्य में मेरु पर्वत के समान होगा । ३२ इस प्रकार विचार करके उसने आकर उसका वरण कर लिया । रम्भ ने बिना किसी से कहे सुने विवाह कर लिया । ३३ दस महीने बीत जाने पर उसके पुत्र उत्पन्न हुआ । उसे पापी ठहराते हुए उसके गोत्र तथा कुल के लोगों ने उसका स्पर्श भी नहीं किया । ३४ उसे पशुहरण-दोष का दोषी बनाकर मारो ! मारो ! कहकर नगर से बाहर भगा दिया । ३५ अपनी पत्नी को लेकर

रहिला अरण्य मध्ये भारिजाकु घेनि ।
मइँषि पण्डा ताहांकु गोड़ाइला पुणि ।। ३६ ।।
देखि कोपे रम्भ ताकु गोड़ाइला मारि ।
से मइँषि पण्डा रम्भ पेट देला चीरि ।। ३७ ।।
भये से मइँषि नेला यक्षंक शरण ।
मइँषि पण्डाकु कले आसि निवारण ।। ३८ ।।
पळाइ मइँषि पण्डा पशिला बनरे ।
देह जळि जिबारु से एक सरोबरे ।। ३९ ।।
पशिण चकटि मन्थि देवारु से पाणि ।
नमर नामे दानब थिला जळे पुणि ।। ४० ।।
मइँष पादरे दळि होइ सेहि मला ।
रागरे मइँषि पण्डा सिंगरे धइला ।। ४१ ।।
बुलाइ फिंगि दिअन्ते बळबन्त पणे ।
नमर असुर शब आसि तत क्षणे ।। ४२ ।।
जहिँ रम्भ शब गोटि पड़ि अछि जाण ।
तहिँ पड़िला से शब गोटि असि पुण ।। ४३ ।।
जक्षमाने से ठाबरे आसि होइ मेळि ।
शबकु पोड़िले काठ खंजि अग्नि जाळि ।। ४४ ।।
रम्भ भारिजा से अग्नि मध्ये झासदेला ।
प्रज्वळित होइ अग्निशिखा उठिगला ।। ४५ ।।

वह जंगल में रहने लगा । तब एक भैंस के पाड़े ने उन दोनों को खदेड़ा । ३६ यह देखकर रम्भ ने क्रुद्ध होकर उसे खदेड़ मारा । उस भैंस के पाड़े ने रम्भ का पेट चीर दिया । ३७ डर करके भैंस ने यक्षों की शरण ग्रहण कर ली । उन्होंने पाड़े को आकर हटा दिया । ३८ भैंस का पाडा भागकर वन में घुस गया । देह तप्त हो जाने के कारण वह एक सरोवर में घुसकर उसका पानी घूम-घूमकर मथने लगा । उस सरोवर के जल में नमर नामक दैत्य रहता था । ३९-४० उसके पैरों तले कुचलकर वह मर गया । कुपित होकर पाड़े ने उसे सींगों पर उठा लिया । ४१ बलपूर्वक घुमाकर फेंकते समय नमर दैत्य का शव जाकर उस स्थान पर गिरा जहाँ रम्भ का शव पड़ा था । ४२-४३ यक्ष लोगों ने मिलकर उस स्थान पर आकर काष्ठ एकत्रित किया तथा आग जलाकर उन शवों को जला दिया । ४४ रम्भ की पत्नी उस आग में कूद पड़ी । अग्नि-

से तिनि असुर शब एकाठि हुअन्ते ।
अग्निर तेज ताहांक देहरे लागन्ते ।। ४६ ।।
पुरुषेक जनमिला अनळ मध्यरु ।
ताहार तेज अधिक अग्नि तेज ठारु ।। ४७ ।।
बळबन्त पणे सेहि मेरुठारु गरु ।
सूर्य डरिले रथे ता शिर लागिबारु ।। ४८ ।।
भाळिले उँआस तिथि आजि त नुहइ ।
ग्रासिबा पाइँकि काहुँ राहुँ आसे धाइँ ।। ४९ ।।
खड्ग गोटा हस्तरे दिशे जक जक ।
तहुँ बाहारि आसन्ति जुळू जुळा पोक ।। ५० ।।
दन्त कट कट करि छाड़इ से रड़ि ।
किबा से प्रळय काळ मेघ घड़ घड़ि ।। ५१ ।।
मन्दर पर्वत ठारु अधिक से मोटा ।
मत्त सिंहरु अधिक चाळिबार छटा ।। ५२ ।।
कालान्तक जम परि महा भयंकर ।
जक्षे डरि पळाइले रूप देखि तार ।। ५३ ।।
तार नाम रक्तर्वीर्य जाण माहेश्वरी ।
कोपे धाइँला असुर खड़गकु धरि ।। ५४ ।।

शिखा प्रज्वलित होकर भभक उठी । ४५ उन तीनों असुर शवों के एकत्रित होने पर तथा अग्नि का तेज उनके शरीर पर लगने से आग के बीच से एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसका तेज अग्नि के तेज से भी अधिक था । ४६-४७ बल एवं पुरुषार्थ में वह सुमेरु से भी अधिक महत्त्वपूर्ण था । उसका शिर रथ में लग जाने से सूर्य डर गये । ४८ वह सोचने लगे कि आज ग्रहण की तिथि तो नहीं है । क्या राहु ग्रसने के लिए तो नहीं दौड़ा आ रहा है ? ४९ उसके हाथ में चमचमाता हुआ एक खड्ग दिखाई पड़ रहा था । उससे जुगनू जैसे कीट निकल रहे थे अर्थात् खड्ग से किरणें निकल रही थीं । ५० दाँत कटकटाते हुए वह हुंकार, गर्जना कर रहा था । लगता था मानों प्रलयकाल के बादल गरज रहे हों । ५१ वह मंदराचल पर्वत से भी अधिक स्थूलकाय था । उसके चलने की छटा मत्त सिंह से भी अधिक थी । ५२ उसके कालान्तक यमराज के समान अत्यन्त भयंकर रूप को देखकर यक्ष डरकर भाग गये । ५३ हे पार्वती ! उसका नाम रक्तवीर्य था । वह दैत्य कुपित

रम्भकु संहारि थिला जेवण महिष ।
ताहाकु जाइँ संहार कला से राक्षस ॥ ५५ ॥
तहुँ पुणि पृथिवीरु महिष माइला ।
बण कन्दर रे मइँषि एक न रखिला ॥ ५६ ॥
रम्भर पुत्र महिष असुरकु छाड़ि ।
तिनि भुवन एकाके बसिला से माड़ि ॥ ५७ ॥
पाताळे पशि दानव बळंकु साधिला ।
ता बळे महिषासुर प्रतापी होइला ॥ ५८ ॥
सत्यजुगे ताकु बध कले कात्यायिनी ।
ताहार संगे जे थिले दानव सइनि ॥ ५९ ॥
पृथिवीरे पूरिथिला से असुर थाट ।
बन्द होइ जाइ थिला हाट घाट बाट ॥ ६० ॥
कात्यायिनींक अंगरु हेले उत्पन्न ।
चउषठि जोगिनी जे भइरबीगण ॥ ६१ ॥
डाकिनी शाकिनी चण्डी चामुण्डा अइले ।
असुर रुधिर पिइ संतोष होइले ॥ ६२ ॥
कोटि कोटि दानवंकु पकाइले मारि ।
देबी गणरे ब्रह्माण्ड जाक गला पूरि ॥ ६३ ॥

होकर खड्ग लेकर दौड़ा । ५४ जिस भैंसे ने रम्भ को मारा था, उस राक्षस ने जाकर उसका वध कर दिया । ५५ फिर वह पृथ्वी पर भैंसों का संहार करने लगा । वनों और कन्दराओं में उसने एक भी भैंस नहीं छोड़ी । ५६ केवल रम्भ के पुत्र महिषासुर को छोड़कर वह तीनो लोकों पर अकेला ही हावी हो गया । ५७ पाताल में घुसकर उसने दानवदल को परास्त किया । उसके बल से महिषासुर का प्रताप बढ़ गया । ५८ सतयुग में देवी कात्यायिनी ने उसका वध किया । उसके संग में, जो दानवसेना थी, वह पृथ्वी पर फैल गयी थी । असुर वाहिनी के द्वारा हाट, गली, घाट अवरुद्ध हो गये । ५९-६० देवी कात्यायिनी के शरीर से चौंसठ योगिनियाँ तथा भैरवीदल प्रकट हुआ । ६१ डाकिनी, शाकिनी, चण्डी तथा चामुण्डा आयीं और असुर-रक्तपान करके सन्तुष्ट हुईं । ६२ देवी-दल से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भर गया; जिन्होंने करोड़ों-करोड़ों दानवों को मार गिराया । ६३ धरा पर फैलकर उन्होंने दानव-दल का भक्षण

पृथिवी व्यापि दानव गण गले खाइ ।
रक्तवीर्य चण्ड मुण्ड उबुरिण जाइँ ।। ६४ ।।
सागर भितरे लुचि रखिले पराण ।
एथु अनन्तरे देवी पार्वती गो शुण ।। ६५ ।।
सावर्ण नामरे मनुराजा हेले जेबे ।
शुम्भ निशुम्भ नमुचि आदि जे दानवे ।। ६६ ।।
ब्रह्मा बळे बळीयार होइ पुरे पुरे ।
दानव मानव देव गन्धर्व किन्नरे ।। ६७ ।।
बळे पशि धरि आणि देले नाना दण्ड ।
अमरावती पुरकु नेले से प्रचण्ड ।। ६८ ।।
दश दिगपाळे हारि पळाइले डरि ।
चण्ड मुण्ड रक्तवीर्य एहा शुणि पारि ।। ६९ ।।
ताहांक पाशे मिळन्ते कले से आदर ।
थाटे सेनापति हेले एहि तिनि बीर ।। ७० ।।
कउशिकी देवी हेले तांक पाइँ जात ।
असुर कुळर पुणि कलेक निपात ।। ७१ ।।
चामुण्डा रूपे माइले चण्ड मुण्ड बेनि ।
रक्तवीर्य रकतरे पूरिला मेदिनी ।। ७२ ।।

किया। रक्तवीर्य तथा चण्ड-मुण्ड भाग निकले। ६४ समुद्र के भीतर छिपकर उन्होंने अपने प्राणों की रक्षा की। हे देवी पार्वती! इसके पश्चात् सुनो। ६५ जब सावर्ण मनु राजा हुए तब शुम्भ-निशुम्भ तथा नमुचि आदि जो दैत्य थे, वह सब ब्रह्मा के वरदान के बल से बलवान होकर नगर-नगर में दानव, मनुष्यों, देवताओं, गन्धर्व तथा किन्नरों को बलपूर्वक पकड़कर लाकर उन्हें अनेक प्रकार के दण्ड-यातनाएँ देने लगे। उन्होंने अपने पुरुषार्थ से स्वर्गपुरी पर अधिकार जमा लिया। ६६-६८ दस दिगपाल पराजित होकर भय से भाग गये। जब चण्ड-मुण्ड तथा रक्तवीर्य ने यह सुना तो उन्होंने मिलकर उनका आदर किया। यह तीनों वीर उनकी सेना के सेनापति हो गये। ६९-७० इनके कारण ही कौशिकी देवी प्रकट हुईं जिसने राक्षसकुल का संहार किया। ७१ उन्होंने चामुण्डा का रूप धारण करके चण्ड और मुण्ड दोनों का वध किया। रक्तवीर्य के रक्त से पृथ्वी भर गयी थी। ७२ पृथ्वी के ऊपर जितने रक्तबिन्दु गिरते

जेते टोपा रक्त महीं उपरे पड़इ ।
तेते गोटा रक्तवीर्य तहुँ उपुजइ ।। ७३ ।।
एमन्ते पृथिवी जाक हेला रक्तवीर्ज ।
एहा देखि देवीगण पाइ बड़ लाज ।। ७४ ।।
कउशिकी माता आगे जणाइले जाइ ।
देवताए स्तुति कले महा भय पाइ ।। ७५ ।।
ततक्षणे भद्राकाळी रूप से धइले ।
समर भुमिरे नेइ खपर पातिले ।। ७६ ।।
कोटि कोटि खपर जे पातिछन्ति तहिँ ।
धाइँले मारलो बोलि देवीँकि से कहि ।। ७७ ।।
गह गह नाद करि धाइँ गले माए ।
लह लह जिभ करि केहि चाटि दिए ।। ७८ ।।
गह गह शबदरे पूरि अछि भही ।
रह रह बोलि केहि जाए आग होइ ।। ७९ ।।
मह मह बासु अछि काहार शरीर ।
टह टह हसइ के पिइण रुधिर ।। ८० ।।
नखे बिदारइ केहि असुरंक बुकु ।
पाति अछन्ति जे माए रणे खपरकु ।। ८१ ।।

थे उतने ही रक्तवीर्य उत्पन्न हो जाते थे । ७३ इस प्रकार सम्पूर्ण धरा पर रक्तवीर्य फैल गये । यह देखकर देवी-दल को बड़ी लज्जा लगी । ७४ उन्होंने कौशिकी माता के आगे जाकर निवेदन किया । महान भय से डरे हुए देवता स्तुति करने लगे । ७५ तब माता कौशिकी ने उसी क्षण भद्रकाली का रूप धारण किया तथा समरांगण में खप्परों का संचार किया । ७६ करोड़ों खप्पर चल पड़े । दौड़ो और मारो इस प्रकार उन्होंने देवी-दल को आज्ञा दी । ७७ घनघोर नाद करती हुई देवियाँ दौड़ पड़ीं । कोई जीभ को लपलपाती हुई चाट रही थी । ७८ पृथ्वी कोलाहल के शब्द से भर गयी । रुक जा ! रुक जा ! कहती हुई कोई आगे-आगे दौड़ रही थी । ७९ किसी का शरीर महमहा कर महक रहा था तथा कोई रक्त पीकर अट्टहास कर रही थी । ८० कोई दैत्यों की छाती नाखून से फाड़ रही थी । देवियों ने संग्राम में खप्पर चला दिये थे । ८१ समरांगण में जितना भी रक्त था वह सब पी गयीं । तब वहाँ

समरे धरि रकत जाक देले पिइ ।
निरकत हेला मला रक्तबीर्य तहिँ ॥ ८२ ॥
महा बळबन्त दैत्य गला जहुँ क्षय ।
स्वर्गपुरे देवताए कले जय जय ॥ ८३ ॥
रक्तबीर्य मला पृथि उश्वास पाइला ।
धीरे धीरे अबसन्ते बसन्त बहिला ॥ ८४ ॥
सहस्र किरण धरि उदे हेले रवि ।
बेळकु बेळ बढ़िला चन्द्रमार छवि ॥ ८५ ॥
सुर सुन्दरी बदन इन्दू बिकासिला ।
दश दिग जाक अति निर्मळ दिशिला ॥ ८६ ॥
मुनि जन मानसर पड़िला उछुळि ।
लहरी भांगि समुद्र जाक दिशे झळि ॥ ८७ ॥
धरणी नेत्रु लोतक धारा गला रहि ।
अनळ शिखा टेकिला जाइ थिला लइ ॥ ८८ ॥
उत्सव रे पूरि गला बासबर पुर ।
खसि न पड़ि गगन तारा हेले स्थिर ॥ ८९ ॥
चउद ब्रह्माण्ड जाके होइ थिला शल ।
पाउथिले से दुरन्त जोगुँ कल बल ॥ ९० ॥
महा प्रतापी दानव गला जहुँ क्षय ।
ब्रह्मा विष्णु रुद्र हृदे आनन्द उदय ॥ ९१ ॥

रक्तहीन होकर रक्तबीर्य मर गया । ८२ महान बलशाली दैत्य का जब विनाश हो गया तब स्वर्गलोक में देवता जय-जय करने लगे । ८३ रक्तबीर्य की मृत्यु होने से पृथ्वी का भार हल्का हो गया । बिना बसन्त के ही मन्द-मन्द बासन्ती पवन बहने लगा । ८४ सहस्र किरणों से युक्त भास्कर उदित हो गये । शनैः-शनैः चन्द्रमा की छवि बढ़ने लगी । ८५ देवांगनाओं के मुख-चन्द्र विकसित हो गये । दसों दिशाएँ अत्यन्त निर्मल दिखाई पड़ने लगीं । ८६ मुनियों के हृदय-सरोवर भर उठे । सागर में सभी ओर लहरों की भंगिमा दिखने लगी । ८७ पृथ्वी के नेत्रों से प्रवाहित अश्रुधार रुक गयी । अवनत अनल-शिखा ऊपर उड़ पड़ी । ८८ इन्द्रपुरी उत्सवों से भर गयी । आकाश में तारा बिना गिरे स्थिर हो गये । ८९ चौदह ब्रह्माण्ड शान्त हो चुके थे, जो उस दुर्दान्त के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो रहे थे । ९० जब महाप्रतापी दानव का विनाश हो गया तब ब्रह्मा, विष्णु

महा बळिष्ठ दानव रक्तबीर्य जाण ।
शोणितबीर्य ताहार अटइ नन्दन ।। ९२ ।।
अक्षयबीर्य नामे ता पुत्र उपुजिला ।
ता तहुँ कनकबीर्य नामे दैत्य हेला ।। ९३ ।।
कनकबीर्य नन्दन जाण सोमबीर्य ।
पिशितबीर्य नामरे ताहार तनुज ।। ९४ ।।
अम्बुबीर्य नामे पुत्र हेला तार जाण ।
अम्बुजबीर्य नामरे ताहार नन्दन ।। ९५ ।।
रजबीर्य नामरे जे पुत्र हेला तार ।
अमृतबीर्य नामरे ताहार कुमर ।। ९६ ।।
बड़बा संगे अमृतबीर्य कला प्रीति ।
हयरूप हेला छाड़ि दानव मूरति ।। ९७ ।।
पुत्रेक जात होइला नामे हयशिरा ।
तारका असुर नामे थिला महावीरा ।। ९८ ।।
तार थाटे सेनापति थिले ए समस्ते ।
तारका असुर मला कार्तिकेय हस्ते ।। ९९ ।।
कार्तिक संगे जे थिले भइरवी गण ।
असुरंकु माइले से खपर पोतिण ।। १०० ।।
रक्तबीर्य बंश जाक देले से निपाति ।
हयशिरा पळाइले पाइ महाभीति ।। १०१ ।।

तथा शिव के हृदय प्रसन्न हो उठे । ९१ रक्तबीर्य महान बलवान दैत्य था । उसका पुत्र शोणितबीर्य हुआ । ९२ अक्षयबीर्य नाम वाला उसका पुत्र उत्पन्न हुआ । उससे कनकबीर्य नामक दैत्य उत्पन्न हुआ । ९३ कनकबीर्य का पुत्र सोमबीर्य हुआ । उसके बेटे का नाम पिशितबीर्य था । ९४ उसके अम्बुबीर्य नाम का बेटा हुआ तथा उसके पुत्र का नाम अम्बुजबीर्य था । ९५ उसके रजबीर्य नामक पुत्र हुआ और उसका पुत्र अमृतबीर्य नाम का था । ९६ अमृतबीर्य ने अश्विनी से प्रेम किया । दानव-शरीर को त्यागकर वह अश्व बन गया । ९७ उसके हयशिरा नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ । तारकासुर नाम का एक महान पराक्रमी असुर था । ९८ यह सभी उसकी सेना के सेनापति थे । कार्तिकेय के हाथों द्वारा तारकासुर का विनाश हुआ । ९९ कार्तिक के साथ में जो भैरवी दल था उसने खप्पर चलाकर असुरों का संहार कर डाला । १०० उन्होंने रक्तबीर्य के समस्त वंश का विनाश कर डाला । हयशिरा भयभीत

हयशिरार नन्दन होइला त्रिशिरा ।
ताहार नन्दन नाम अटे एकशिरा ॥ १०२ ॥
तातहुँ जनम हेला दनुज जे घोर ।
अन्धक नामे हिरण्य दइत्य कुमर ॥ १०३ ॥
महा प्रतापी हेला से महारुद्र वरे ।
गोटि गोटि देवतांकु जिणिला समरे ॥ १०४ ॥
तुम्भंकु देखि कामरे होइला से भोळ ।
काहारि कथा न मानि हिरण्यर बाळ ॥ १०५ ॥
हटकेश्वर पुरकु जाइ थिलु आम्भे ।
एका होइ कइळा से थिल देवी तुम्भे ॥ १०६ ॥
तुम्भंकु हरिबा पाइँ अन्धक असुर ।
थाट घेरि अइला से कइळास पुर ॥ १०७ ॥
हयशिरा बंश तार थाटे सेनापति ।
असुर बळ घेनि से पुररे पशन्ति ॥ १०८ ॥
शतपुर करि तुम्भ पुरकु बेढ़िले ।
नन्दी बीरभद्र तांक संगे जुद्ध कले ॥ १०९ ॥
न पारिले तांकु सेहि पशिले झसाइ ।
ताहा देखि महा कोप कल महादेइ ॥ ११० ॥

होकर भाग निकला । १०१ हयशिरा का पुत्र त्रिशिरा हुआ और उसके पुत्र का नाम एकशिरा था । १०२ उससे दुर्दान्त दानव का जन्म हुआ । जिसका नाम अन्धक था तथा हिरण्य दैत्य का पुत्र था । १०३ महादेव के वर से वह महान प्रतापी हुआ । उसने युद्ध में एक-एक करके देवताओं को जीत लिया । १०४ तुम्हें देखकर वह काम से मोहित हो गया । हिरण्य के पुत्र ने किसी की भी बात नहीं मानी । १०५ मैं हटकेश्वरपुर को गया था । हे देवी पार्वती ! तुम अकेली ही कैलाश में थीं । १०६ अन्धकासुर तुम्हारे हरण के लिए सेना लेकर कैलाश में घिर आया । १०७ उसकी सेना के सेनापति हयशिरा वंश के थे । वह असुर-दल लेकर कैलाश में घुसने लगे । १०८ सौ-सौ करके उन्होंने तुम्हारे भवन को घेर लिया । नन्दी तथा वीरभद्र ने उनके साथ युद्ध किया । १०९ वह उनको परास्त न कर सके और वेग से भीतर प्रविष्ट हो गये । हे महादेवी ! यह देखकर तुमने अत्यन्त क्रोध किया । ११० तुम्हारे अंग से कराली गण प्रकट हुए जिन्होंने हयशिरा

कराळी गण तोहर देहुँ हेले जात ।
हयशिरा बंशकु से कलु गो निपात ।। १११ ।।
पळाइला घोर दैत्य तहुँ भय पाइ ।
अन्धक आगरे सबु कहिला बुझाइ ।। ११२ ।।
से बाहि आसिला ताकु माइलु जे आम्भे ।
पळाइ पशिला घोर दैत्य सिन्धु गर्भे ।। ११३ ।।
केतेक दिने से पुणि होइला उदीत ।
काळी रूपे ताकु तुहि कलु गो निपात ।। ११४ ।।
दुर्गम नामे ताहार थिला जे नन्दन ।
बिश्वकर्माकु सेविला से बहुत दिन ।। ११५ ।।
प्रसन्ने ताहाकु बर देला बिश्वकर्मा ।
महा प्रतापी होइला से दुर्गम नामा ।। ११६ ।।
आकाशरे एकपुर कलाक निर्माण ।
तहिँरे थाट रखि से करइ प्रयाण ।। ११७ ।।
सकळ पदार्थ तहिँ रखिथाइ पुणि ।
अस्त्र शस्त्र रखिथाइ आपे जे निर्माणि ।। ११८ ।।
दुर्गम गढ़ करिण रहिछि असुर ।
पबन पराये गति अटइ ताहार ।। ११९ ।।
गढ़ सहित ताहार उड़े ता संगरे ।
केहि जिणि न पारिले ताहाकु समरे ।। १२० ।।

वंश का संहार कर डाला । १११ घोर दैत्य भयभीत होकर भाग गया और उसने अन्धक के समक्ष सब कह सुनाया । ११२ उसके आने पर मैंने उसे मार डाला । घोर दैत्य भागकर समुद्र के गर्भ में घुस गया । ११३ कुछ दिनों के पश्चात् वह पुनः निकल आया, तब काली रूप धारण करके तुमने उसका वध कर डाला । ११४ दुर्गम नामवाला जो उसका पुत्र था, उसने बहुत दिनों तक विश्वकर्मा की सेवा की । ११५ विश्वकर्मा ने प्रसन्न होकर उसे वर प्रदान किया, जिससे दुर्गम नामक दैत्य अत्यन्त प्रतापी हो गया । ११६ उसने आकाश में एक नगर का निर्माण किया । वह वहीं पर सेना रखकर प्रस्थान किया करता था । ११७ उसने वहाँ पर समस्त पदार्थ रख छोड़े थे । उसने स्वयं ही अस्त्र-शस्त्र बनाकर रख लिये थे । ११८ वह असुर दुर्गम गढ़ बनाकर उसी में रहता था । उसकी गति वायु के समान ही थी । ११९ वह

हरि हर ब्रह्मा इन्द्र चन्द्रहिँ बरुण ।
जम सोम नइऋत आदि देवगण ॥ १२१ ॥
दुर्गम असुर संगे न पारिळि जुझि ।
दुर्ग निर्माणि अछइ आकाशर मझि ॥ १२२ ॥
एमन्ते बहुत काळ गला गो पार्वती ।
देबे जे बहुत कष्ट पाइ दिबा राति ॥ १२३ ॥
चिन्तारे देह तांकर पड़िलाक झड़ि ।
बृहस्पति कहिले जे पांजि गोटा काढ़ि ॥ १२४ ॥
जोगमायांकु जे स्तब कर एक लये ।
मरिब दानब बर ताहांक उपाये ॥ १२५ ॥
पुरुष हस्ते कदापि न मरिब सेहि ।
रम्भ दैत्य अग्निठारु वर अछि नेइ ॥ १२६ ॥
एमन्त शुणि देवता माने तहुँ गले ।
मेरु परबते रहि स्तुति आरम्भिले ॥ १२७ ॥
कर पल्लवकु नेइ निवेशिले शिरे ।
लय लगाइले महाभायांक पयरे ॥ १२८ ॥
इन्द्रिय मान निरोधि बसि जोगासने ।
दश दुआरे पवन रुन्धिले पबने ॥ १२९ ॥

अपने दुर्ग के साथ ही उड़ता था। युद्ध में उससे कोई जीत नहीं पाता था। १२० ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र, चन्द्र, वरुण, यम, सोम, नैऋत्य आदि देवगण दुर्गम दैत्य के साथ युद्ध नहीं कर पा रहे थे। वह दुर्ग बनाकर आकाश में ही रहता था। १२१-१२२ हे पार्वती ! इस प्रकार बहुत समय व्यतीत हो गया। दिन-रात देवताओं ने प्रचुर कष्ट झेले। १२३ चिन्ता से उनके अंग मुरझा गये। बृहस्पति ने पत्रा देखकर कहा। १२४ एकाग्रचित्त होकर योगमाया की स्तुति करो। उन्ही के उपाय से श्रेष्ठ दानव का बिनाश होगा। १२५ यह पुरुष के हाथ से कभी भी नहीं मरेगा। रम्भ दैत्य ने अग्नि से वर प्राप्त कर लिया है। १२६ इस प्रकार सुनकर देवतागण वहाँ से चल पड़े और उन्होंने सुमेरु पर्वत पर स्थित होकर स्तुति प्रारम्भ कर दी। १२७ उन्होंने कर पल्लवों को अपने शिर पर लगाकर महामाया के चरणों में ध्यान लगाया। १२८ इन्द्रियों को अवरुद्ध करके योगासन पर बैठकर दसों द्वारों से प्राणवायु को रोक लिया। १२९ उन्होंने कहा, हे योगमाया ! एक बार कृपा कर दो।

बोइले गो जोगमाया करबारे दया ।
तुहि जया तु बिजया तुहि मा अभया ।। १३० ।।
तोहर महिमा एका तुहि सिना जाणु ।
तुहि आदि तु अनादि अणु परमाणु ।। १३१ ।।
तुहि रूपा तु अरूपा जगत कारिणी ।
तोहर महिमा ब्रह्मा न पारे बखाणि ।। १३२ ।।
तोहर नामकु गणि पारिब बा किए ।
अगणित समुद्रर बालिर पराये ।। १३३ ।।
अवध्य महिष सुर बधिलु गो मात ।
रक्तबीर्य बंशकु तु कलु गो निपात ।। १३४ ।।
एबे ए असुर डरे स्वर्गपुर छाड़ि ।
तोते डाकु अछु मात अति दुःखे पड़ि ।। १३५ ।।
रखिले रखिबु तुहि न रखिले मलु ।
पूर्वे तु आम्भंकु माता बर देइथिलु ।। १३६ ।।
एमन्ते करन्ते स्तुति बिष्णु आदि देबे ।
असुर गुपतचर थिला मेरु गर्भे ।। १३७ ।।
कहिँला जाइ दानव आगरे बुझाइ ।
भो मणिमा कि कहिबि देबे तुम्भ पाइँ ।। १३८ ।।

तुम जया हो, विजया हो और माता, तुम्हीं अभया हो । १३० तुम्हारी महिमा एकमात्र तुम्हीं जानती हो । अणु-परमाणु, आदि-अनादि तुम्हीं हो । १३१ रूप-अरूप अर्थात् साकार-निराकार तुम्हीं हो । तुम्हीं जगत की स्रष्टा हो । तुम्हारी महिमा का वर्णन ब्रह्मा भी नहीं कर सकते । १३२ तुम्हारे नामों की गणना कौन कर सकता है ? समुद्र-सिकता-कणों के समान वह अगणित हैं । १३३ हे माता ! तुमने अवध्य महिषासुर का संहार किया है । तुमने ही रक्तवीर्य के वंश का विनाश किया है । १३४ इस समय राक्षस के भय से स्वर्गपुर का त्याग कर अत्यन्त कष्ट में पड़कर हे माता ! तुम्हें हम पुकार रहे हैं । १३५ यदि तुम हमारी रक्षा करोगी तो हम बच जायेंगे, अन्यथा अरक्षित होकर मृत्यु को प्राप्त होंगे । हे माता ! पूर्वकाल में तुमने हमें वर प्रदान किया था । १३६ इस प्रकार विष्णु आदि देवताओं द्वारा स्तुति करते समय उसी सुमेरु पर्वत पर दैत्य का कोई गुप्तचर उपस्थित था । १३७ उसने जाकर दानव के समक्ष बताया कि हे राज-राजेश्वर ! मैं क्या कहूँ ? देवता लोग नित्य तुम्हारे लिए एकाग्र होकर रात-दिन योग द्वारा

जोगमाया स्तव बसि पढ़ुछन्ति निति ।
एक लये एक जोगे नाहिँ दिवा राति ॥ १३९ ॥
एमन्त शुणि दानव मंत्रीकि हकारि ।
बोइला शुण तु एबे दूतर गुहारि ॥ १४० ॥
देबे तप करुछन्ति मारिबाकु मोते ।
अबिश्वासी देवंकु जे न जिबा परते ॥ १४१ ॥
समस्ते एकाठि होइ मेरु गिरि शिखे ।
ब्रह्मा बिष्णु रुद्र इन्द्र आदि एक मुखे ॥ १४२ ॥
जोगमाया स्तव बसि पढ़ुछन्ति निति ।
कि बुद्धि करिबा कह बिचारिण मंत्री ॥ १४३ ॥
ताहार मंत्रीर नाम अटे कल्पसुर ।
बोइला भो राजा एबे मोर बोलकर ॥ १४४ ॥
ए बेळे जाइ ताहांकु पकाइबा बान्धि ।
ताहांक तप भांगिले हेब सर्वसिद्धि ॥ १४५ ॥
एमन्त शुणि मंत्रीर मुखु से असुर ।
स्वर्गकु उड़ाइ नेला पबन प्रकार ॥ १४६ ॥
माड़ि पड़िला से गढ़ मेरुशिखे जाइँ ।
बन्दि होइले सकळ देवताए तहिँ ॥ १४७ ॥
करे अस्त्र शस्त्र नाहिँ समस्ते निश्चत ।
असुर गढ़कु देखि होइले चकित ॥ १४८ ॥

योगमाया की स्तुति कर रहे हैं । १३८-१३९ इस प्रकार सुनकर दानव मंत्री को बुलाकर कहा कि तुम अब दूत की बात सुन लो । १४० मुझे मारने के लिए देवता लोग तप कर रहे हैं । अविश्वासी देवताओं का कोई भरोसा नहीं है । १४१ मेरु पर्वत के शिखर पर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्रादि देवता एकत्रित होकर एक लय में नित्य योगमाया का स्तुति-पाठ करते हैं । मंत्री, अब विचारकर तुम्हीं बताओ कि क्या किया जाय ? १४२-१४३ उनके मंत्री का नाम कल्पासुर था । वह बोला, हे राजन् ! हमारी बात सुनो । १४४ इसी समय जाकर उन्हें बाँध देंगे । उनकी तपस्या भंग हो जाने पर सारा कार्य सिद्ध हो जाएगा । १४५ मंत्री के मुख से इस प्रकार वचनों को सुनकर वह दैत्य वायु के समान गढ़ को उड़ाकर स्वर्ग की ओर चला । १४६ वह गढ़ सुमेरु पर्वत के शिखर के ऊपर आ गिरा । सभी देवगण वहाँ बन्दी बना लिये गये । १४७ हाथों में अस्त्र-शस्त्र न होने

रागे बोइले केणिकि गलु रे कुनखा ।
सुखा दुःखा पञ्चशिषा सुमुखा दुर्मुखा ॥ १४९ ॥
भीममुखा रक्तजिह्वा अरुणा दारुणा ।
लम्बशिरा खुरणसा भीमा गोत्रहणा ॥ १५० ॥
धर धर बेगे जाइँ बिळम्ब न कर ।
गोटि गोटि करि बन्दि आण मो छामुर ॥ १५१ ॥
देखिबा ना ताहांकर बळबुद्धि केते ।
जोगमाया आसि तांकु रखिबे केमन्ते ॥ १५२ ॥
एतेक शुणि धाइँले दुर्दान्त असुरे ।
अंगुळि देखान्ते जेन्हे शिकारी कुकुरे ॥ १५३ ॥
धाइँ जाइ कामुड़न्ति तेसने से जाइ ।
गोटि गोटि बिन्धिले से डाक हाक होइ ॥ १५४ ॥
मढ़ देखि जेन्हे कुआ शागुणा हुअन्ति ।
शृगाळ कुकुर तहिँ कळह करन्ति ॥ १५५ ॥
तेसन आनन्द होइ गोटि गोटि धरि ।
बान्धि घेनि जाउछन्ति चोर धरा परि ॥ १५६ ॥
डरे देवतांक मुखु न आसइ कथा ।
निदारुण असुर जे मारन्ति गळथा ॥ १५७ ॥

के कारण सभी निःशस्त्र थे। वे देव दैत्य-दुर्ग को देखकर चकित हो गये। १४८ राक्षस क्रुद्ध होकर बोला, अरे कुनखा ! तू कहाँ चला गया ? सुखा, दुःखा, पंचशिखा, सुमुखा, दुर्मुखा, भीममुखा, रक्तजिह्वा, अरुणा दारुणा, लम्बशिरा, खुरणसा, भीमा तथा गोत्रहणा ! १४९-१५० पकड़ लो ! वेग से जाकर पकड़ो। देर मत करो। एक-एक को बाँधकर मेरे समक्ष ले आओ। १५१ देखूँगा कि उनका बल और बुद्धि कितनी है योगमाया आकर कैसे उनकी रक्षा करती है। १५२ इतना सुनते ही दुर्दान्त दानव दौड़ पड़े। जिस प्रकार उँगली का संकेत देने पर शिकारी कुत्ते दौड़ पड़ते हैं, १५३ वैसी ही जल्दी में दौड़कर वह काटने लगे। उन्होंने एक-एक को ललकारते हुए बींध डाला। १५४ जैसे शव को देखकर कौवे और गृध्र आतुर हो जाते हैं। शृगाल और श्वान आपस में कलह करने लगते हैं। १५५ उसी प्रकार प्रसन्न होकर एक-एक को पकड़कर बन्धन में डालकर चोरों के समान पकड़कर ले चले। १५६ भय के कारण देवताओं के मुख से वाक्य नहीं निकल रहे थे। क्रूर दानव उन

दुर्गम दानव चाहिँ बोलइ से हसि ।
किरे देवता किम्पाइ दुःखे अछ बसि ॥ १५८ ॥
मोहर मरिबा पाइँ बिचार तुम्भर ।
एबेत मल रे इष्ट देवता सुमर ॥ १५९ ॥
जेउं जोगमाया स्तुति पढ़ि थिल बसि ।
ताहाकु डाक तुम्भंकु रखु सेहि आसि ॥ १६० ॥
धिकरे तुम्भ जीबन धिक तुम्भ बळ ।
पुरुष पथ छाड़ि रे हेउछि बिकळ ॥ १६१ ॥
छार स्तिरी गोटाकु रे करु अछ स्तुति ।
काहिँ देखिछ शुणिछ किरे एहि रीति ॥ १६२ ॥
पुरुष होइ स्तिरीकि जीवनरे भये ।
स्तुति करइ से ताकु रखइ उपाये ॥ १६३ ॥
पुरुष संगे समर करि सेहि नारी ।
काळजम मुखरु कि जिबरे उबुरि ॥ १६४ ॥
जेबे बोलिब गोटाए स्तिरी आसि पूर्वे ।
महिषासुरकु मारिथिला किरे देबे ॥ १६५ ॥
से कथा गोटाकु दृढ़ करिछ रे मूढ़ ।
असुर नोहे से पशु तार कथा छाड़ ॥ १६६ ॥

घेंचा मार रहे थे । १५७ दुर्गम दैत्य उन्हें देखकर हँसते हुए कहने लगा, अरे देवताओ ! किस कारण से तुम दुःखी बैठे हो ? १५८ तुम्हारा विचार मुझे मारने का है । अब तो तुम लोग मरे । अपने इष्टदेव का स्मरण कर लो । १५९ जिस योगमाया की स्तुति बैठकर कर रहे थे, उसे पुकारो ! वह आकर तुम्हारी रक्षा करे । १६० तुम्हारे जीवन और तुम्हारे बल को धिक्कार है । पौरुष-पथ का त्याग कर व्याकुल हो रहे हो । १६१ एक तुच्छ स्त्री की स्तुति कर रहे हो । तुमने यह रीति कहाँ देखी है और कहाँ से सुनी है ? १६२ पुरुष होकर जीवन के रक्षार्थ स्त्री से प्रार्थना कर रहे हो कि वह उपाय करके तुम्हारी रक्षा करे । १६३ पुरुष के साथ में वह स्त्री संग्राम करके क्या काल के गाल से बच पाएगी ? १६४ अरे देवताओ ! यदि तुम कहो कि पूर्वकाल में एक स्त्री ने आकर महिषासुर को मारा था । १६५ अरे मूर्खो ! उसी एक बात को तुम दृढ़ता से पकड़े हो । वह क्या कोई असुर था ? उसकी बात छोड़ दो वह तो पशु था । १६६

रक्तबीर्य नामे पूर्वे दानवेक थिला ।
स्तिरी छार होइ ताकु मारि पकाइला ॥ १६७ ॥
दुर्बळ असुर तार बळ नाहिँ काये ।
उत्पत्ति तार तेलुणि पोक मन्दा प्राये ॥ १६८ ॥
रकत टोपारु जात हुए से असुर ।
ताहाकु केमन्ते आम्भे बोलिबाना वीर ॥ १६९ ॥
रकतहिँ तार बीर्ज तहुँ सेहि जात ।
रकत चाटि दिअन्ते हेला से निपात ॥ १७० ॥
मूळु माइले जेसने डाळ जाइ मरि ।
बीज बिहुने अंकुर न हुए जेपरि ॥ १७१ ॥
तेसने रकत बिन्दु तार सिना प्राण ।
ताकु चाटि द्यन्ते तार भाजिलाक ज्ञान ॥ १७२ ॥
पशु प्राय तार बंश देले विषाबली ।
एथि पाइँ बीर तुल्य हेबे किरे स्तिरी ॥ १७३ ॥
आबर बोलिब शुम्भ निशुम्भ माइले ।
आपणा दोष रे सेहि आपे आपे मले ॥ १७४ ॥
पुराणे अछि जे जण हुए कामातुर ।
ताहार जीवन जम बरे निरंतर ॥ १७५ ॥

प्राचीन काल में रक्तबीर्य नाम का एक दानव था। एक तुच्छ स्त्री ने उसे मार गिराया। १६७ वह असुर दुर्बल था। उसके शरीर में बल नहीं था। उसकी उत्पत्ति तो बीरबहूटी कीड़े के समान थी। १६८ रक्त की बूंद से वह दैत्य पैदा हो जाता था। उसे हम वीर कैसे कह सकते हैं। १६९ रक्त ही उसका वीर्य था और उसी से वह पैदा होता था। रक्त चाट लेने से उसका विनाश हो गया। १७० जड़ काट देने से जैसे शाखा मर जाती है। जिस प्रकार बीज के बिना अंकुर नहीं होता है। १७१ उसी प्रकार रक्त-बिन्दु ही उसका प्राण था। उसे चाट देने से वह ज्ञानशून्य हो गया। १७२ पशुओं के समान उसके वंश की बलि देने से क्या वह स्त्री वीर हो गयी? १७३ तुम फिर कहोगे कि उसने शुम्भ-निशुम्भ को मारा। वह तो अपने ही दोषों से अपने आप मर गये। १७४ शास्त्रों में कहा गया है कि जो व्यक्ति कामातुर हो जाता है। यमराज निरंतर उसका जीवन हर लेता है। १७५ अरे नीचो!

आबर पुराण बाणी शुण रे पायरे ।
निरते भय थाएटि जाहार अन्तरे ॥ १७६ ॥
ताहार दुःख केबळ क्षणे नाहिं सुख ।
कामी जे हुए ताहार चित्त दक दक ॥ १७७ ॥
साहस धइर्ज बळ बुद्धि जाए हजि ।
स्तिरींक ठारे निरते चित्त थाए मज्जि ॥ १७८ ॥
अशन बसन ताकु हुए बिष पिता ।
बाउँश घुण लागिला प्राय तार चिन्ता ॥ १७९ ॥
केमन्ते सेहि स्तिरीकि पाइबि एमन्ते ।
चिन्ता करुथाइ बसि जाण दिबा राते ॥ १८० ॥
भितरे भितरे पशि पोक जेउँ परि ।
बाउँशकु काटि खोळि करि दिये सारि ॥ १८१ ॥
तेसने से चिन्ता जार देह करे क्षीण ।
आपणा इच्छारे आपे दिये नेइ प्राण ॥ १८२ ॥
तेणु से मला ताहार दोष मूढ़पण ।
गणा होइबे कि सेहि बीर मध्ये जण ॥ १८३ ॥
जेबे तुम्भे से स्तिरीकि बीरा बोलि जाण ।
आसि तुम्भंकु उद्धारु आरे देवगण ॥ १८४ ॥

और भी शास्त्रों की वाणी सुनो । जिसके हृदय में सदा भय बना रहता है, उसे केवल दुःख ही मिलता है । क्षणमात्र के लिए भी सुख नहीं प्राप्त होता । जो व्यक्ति कामुक होता है उसका हृदय धक्-धक् किया करता है । १७६-१७७ उसका साहस, बुद्धि, बल और धैर्य सब खो जाता है । उसका मन सदा स्त्री में ही लगा रहता है । १७८ भोजन तथा परिधान उसे विष के समान कटु लगते हैं । चिन्ता के कारण वह घुन लगे हुए बाँस के समान हो जाता है । १७९ उस स्त्री को किस प्रकार से पाया जाय । वह रात-दिन बैठकर यही सोचा करता है । १८० जैसे कीड़ा भीतर ही भीतर घुसकर बाँस को काट, पोल करके सारहीन कर देता है । १८१ वैसे ही इस प्रकार की चिन्ता उसके शरीर को जर्जर कर देती है । अपनी इच्छा से ही वह अपने प्राण विसर्जित कर देता है । १८२ इसी लिए वह अपने दोष और मूर्खता के कारण मर गया । क्या उसकी गणना वीरों की श्रेणी में की जा सकती है । १८३ यदि तुम लोग उस स्त्री को वीर समझते हो तो अरे देवताओ ! वह आकर तुम्हारी रक्षा करे । १८४

एमन्त कहि हसइ टह टह होइ।
बोलइ ब्रह्मा तो ठारु दुष्ट केहि नाहिँ ॥ १८५ ॥
तोहर ए सबु बुद्धि जाणिलि एथर।
थिबारु सिना पामर चारि गोटा शिर ॥ १८६ ॥
मिछे बेदकाण्डि केते पढ़िण बुझाउ।
कुमंत्रणा देइ तांकु कुमार्ग देखाउ ॥ १८७ ॥
जेबे तु एहांकु एहि बुद्धि न दिअन्तु।
किम्पाइ तुहि एहांक संगतरे थान्तु ॥ १८८ ॥
सेहि चारि गोटि शिर काटि देले तोर।
सुस्थे रहिब आजहुँ जाण ए संसार ॥ १८९ ॥
आरे बिष्णु तुहि परा कूट कपटिआ।
काहिँ गला तोर कूट होइ अछु ठिआ ॥ १९० ॥
देबंक पाइँ परा तु धरि थाउ चक्र।
दैत्यंकु देखिले मुख करि देउ बक्र ॥ १९१ ॥
बोलिथाउ दुष्टंकु मुँ करइ संहार।
करु नाहान्तिकि दुष्ट पण ए अमर ॥ १९२ ॥
एहांकु किम्पाइँ तुहि न मारु रे कह।
बिचार तोहर छोट बिराडि पराय ॥ १९३ ॥

इस प्रकार कहकर वह ठट्ठा मारकर हँसने लगा और बोला, अरे ब्रह्मा ! तेरे समान दुष्ट और कोई नहीं है। १८५ अब हम समझ गये कि यह सब तेरी ही चाल है। अरे नीच ! फिर तेरे तो चार शिर हैं। १८६ झूठ-मूठ वेद पढ़कर इन्हें बरगलाते हो। कुमंत्रणा देकर इन्हें बुरा रास्ता दिखाते हो। १८७ यदि तुम इन लोगों को ऐसी बुद्धि न देते तो फिर तुम इन लोगों के साथ क्यों रहते ? १८८ यह तेरे चार शिर काट देने से आज से यह संसार विश्राम प्राप्त करेगा, यह तुम समझ लो। १८९ अरे बिष्णु ! तू तो कपटी और कुटिल है। तू खड़ा है। तेरा छल कहाँ चला गया ? १९० तू तो देवताओं के लिए ही चक्र धारण करता है। दैत्यों के देखते ही तू मुख टेढ़ा कर लेता है। १९१ तू कहा करता है कि मैं दुष्टों का संहार करता हूँ। क्या यह देवता लोग दुष्टता नहीं करते हैं ? १९२ अरे बोल ! तू इन्हें क्यों नहीं मारता ? बिल्ली के समान तेरा विचार बड़ा ही ओछा है। १९३ जैसे वह तिलचट्टे को निर्बल

से जेन्हे दुर्बळ देखि असर्पाकु मारे ।
तेसन तु सिंह सिना दुर्बळ उपरे ॥ १९४ ॥
बळबन्त देखिले जे डरे थाउ लुचि ।
समुद्र मध्यरे रहिथाउ कूट पाञ्चि ॥ १९५ ॥
देबंक पक्ष धरि तु करुअछु मेळि ।
एहि क्षणि तोते धरि देबि बिषाबळि ॥ १९६ ॥
आरे रुद्र मिछ तुहि जोगी जे बोलाउ ।
हाते गोटा थाळ धरि भिक मागुथाउ ॥ १९७ ॥
घर द्वार नाहिँ तोर मशाणिरे रहि ।
हाड़ माळ करि गळे थाउ पुणि बहि ॥ १९८ ॥
डम्बरु गोटाए धरि नाचु थाउ पुणि ।
निर्लज्ज प्राय काखेइ थाउ तु रमणी ॥ १९९ ॥
बळद गोटाए चढ़ु पापकु न डरु ।
जटा काटि पकाइबि नेबइँ डम्बरु ॥ २०० ॥
एमन्त गोटि गोटिकि दिअइ ले गाळी ।
खड़ग धरि हलाइ दिए महाबळी ॥ २०१ ॥
दान्त कट मट करि चाहेँ महा रागे ।
भयरे देवतामाने न रहन्ति आगे ॥ २०२ ॥

समझकर मार डालती है उसी प्रकार तू दुर्बल व्यक्तियों पर सिंह के समान हो जाता है। १९४ बलवान को देखकर तू भय से छिप जाता है। छल-प्रपंच सोचते हुए तू समुद्र के बीच में निवास करता है। १९५ देवताओं का पक्षधर बनकर सम्मेलन करता है। इसी समय पकड़कर तेरी बलि दे दूंगा। १९६ अरे शंकर! तू झूठ ही योगी कहलाता है। हाथ में एक पात्र लेकर भिक्षा माँगकर खाता है। १९७ तेरे घर-द्वार तो है नहीं। तू श्मशान में रहता है। हड्डियों की माला गले में पहन कर घूमता रहता है। १९८ एक डमरू लेकर तू नाचता रहता है तथा निर्लज्ज के समान स्त्री को गोद में लिये रहता है। १९९ तू एक बैल पर चढ़ता है। पाप से भी नहीं डरता। तेरी जटाएँ काटकर गिरा दूंगा और तेरा डमरू छीन लूंगा। २०० इस प्रकार एक-एक को वह गालियाँ दे रहा था। महान पराक्रमी खड्ग लेकर हिला देता था। २०१ दाँतों को कट-कटाकर क्रुद्ध होकर ताल देता था। भय के कारण कोई देवता उसके आगे नहीं ठहरता था। २०२ देवताओं की इस दुर्दशा को जानकर

देवंक एहि दुर्दशा जाणि महामाई ।
हुँकार नाद करे से गगनरे थाइ ॥ २०३ ॥
असुर आगे मिळिले करे धरि खण्डा ।
जगत जन मोहिनी रूपे गळे धण्डा ॥ २०४ ॥
षोळ गोटि भुजरे जे बिराजइ अस्त्र ।
केबण हस्ते बिराजु अछि असिपत्र ॥ २०५ ॥
केबण करे मुद्गर विकट दिशइ ।
केबण करे शकति गोटा बिराजइ ॥
केबण करे उज्ज्वळि मूषळ अछइ ।
केबण करे शकति गोटा बिराजइ ॥ २०६ ॥
केउँ हस्ते धनु केउँ हस्ते शोहे शर ।
केउँ हस्तरे पट्टिश केउँ हस्ते बर ॥ २०७ ॥
केउँ हस्ते कुन्त केउँ हस्ते अछि पाश ।
केबण हस्ते खपर केउँ हस्ते प्रास ॥ २०८ ॥
केउँ हस्ते शूळ केउँ हस्ते अछि जष्टि ।
केउँ हस्ते काति केउँ हस्ते छुरि गोटि ॥ २०९ ॥
सिंह पीठिरे बिजय देबी महामाई ।
दुर्दान्त दानव देबी रूपकु जे चाहिँ ॥ २१० ॥

महामाया आकाश मे स्थित होकर हुंकार करने लगी । २०३ राक्षस लोग हाथों में खड्ग लेकर आगे आकर मिले । जगत-जनों को मोहित करने वाले रूप को देखकर वह अवाक् रह गये । २०४ उनकी सोलह भुजाओं में अस्त्र-शस्त्र शोभित हो रहे थे । किसी हाथ में तलवार शोभित हो रही थी । २०५ किसी हाथ में विकराल मुग्दर दिख रहा था । किसी हाथ में एक शक्ति शोभा पा रही थी । किसी हाथ में उज्ज्वल मूसल और किसी हाथ में शक्ति शोभा पा रही थी । २०६ किसी हाथ में धनुष और किसी में बाण सुशोभित था । किसी हाथ में पट्टिश और किसी में बर शोभा पा रहा था । २०७ किसी हाथ में कुन्त तथा किसी में पाश था । किसी हाथ में खप्पर तथा किसी में बर्छा था । २०८ किसी हाथ में शूल तथा किसी में छड़ी थी । किसी हाथ में काँता और किसी हाथ में छुरी थी । २०९ महामातेश्वरी सिंह की पीठ पर विराजमान थीं । दुर्दान्त असुर ने देवी के रूप को देखा । २१० वह राक्षसों को देखकर कुपित होकर बोला,

असुरंकु चाहिँ कोपे बोले मारमार।
धाइँले दुर्मुख आदि जेतेक असुर ॥ २११ ॥
अस्त्र शस्त्र धरि चारि पाखे गले घेरि।
दानव बळ ध्वंसिले देबी शर मारि ॥ २१२ ॥
असंख्य असुर थाट आसुछन्ति माड़ि।
जेसने समुद्र मध्ये आसइ लहड़ी ॥ २१३ ॥
गिरिप्राय बिराजइ असुरंक काय।
समर करन्ति चित्ते तिळे नाहिँ भय ॥ २१४ ॥
बाइद जे बिजि घोष दाउण्डि निसाण।
सुरा पाने मत्त होइ निशाचरगण ॥ २१५ ॥
खण्डा शावेळि लांकिया परिघ मारन्ति।
देखि दुर्गादेबी हेले तहिँ कोप मूर्ति ॥ २१६ ॥
चण्डी चामुण्डा जोगिनी भैरवी डाकिनी।
ताळी बेताळी कंकाळी रंकुणी शाकिनी ॥ २१७ ॥
काळी कराळी प्रचण्ड उग्रचण्डा गण।
बाहारिले देवींकर देहु पण पण। २१८ ॥
लह लह जीभ करि गह गह नादे।
टह टह हस हस पशिळ बिबादे ॥ २१९ ॥

मारो ! मारो ! दुर्मुख आदि जितने भी दैत्य थे वह सब दौड़ पड़े। २११ अस्त्र-शस्त्र लेकर चारों ओर से घिर आये। देवी ने बाण मारकर दानव-दल को ध्वंस कर दिया। २१२ असुरों की असंख्य सेना बढ़ती चली आ रही थी, जिस प्रकार समुद्र में लहरें आती रहती हैं। २१३ दैत्यों की काया पहाड के समान थी। बिना तिल भर भय के वह युद्ध कर रहे थे। २१४ विजय-घोष, नगाड़े तथा निशान आदि बाजे बज रहे थे। निशाचरों के दल मद्य पीकर उन्मत्त हो गये थे। २१५ खाँड़ा, शावेल, भुजाली तथा परिघ से प्रहार कर रहे थे। यह देखकर दुर्गादेवी अत्यन्त कुपित हो गयीं। २१६ तभी देवी के अंग से चटपट चण्डी, चामुण्डा, योगिनी, भैरवी, डाकिनी, ताली, बेताली, कंकाली, रंकुणी, शाकिनी, काली, कराली, प्रचण्डा तथा उग्रचण्डा के दल के दल निकल पड़े। २१७-२१८ जीभ लपलपाती, घनघोर गर्जन तथा अट्टहास करती हुई वह युद्ध करने लगीं। २१९ कोई ताली बजाकर थेइ-थेइ नृत्य कर रही

कर ताळि मारि केहि नाचे थेइ थेइ ।
केहि खेमटा नाचइ केश मुकुळाइँ ॥ २२० ॥
केहि दान्त कटमट करि धीरे धीरे ।
नाचि नाचि जाउ अछि समर भुमिरे ॥ २२१ ॥
काहार मुख विकट नासा अति छोट ।
काहार शिरे बिराजु अछइँ मुकूट ॥ २२२ ॥
काहार नाभि गभिर अन्धकूप परि ।
काहार बाळ झाम्पुड़ा धाएँ आँ आँ करि ॥ २२३ ॥
काहार बहुत आखि मुण्ड खपुरिरे ।
काहार दान्त बहुत अटइ पाटिरे ॥ २२४ ॥
धाइँले से देबीगण कोटि कोटि होइ ।
असुर मानंकु धरि दान्तरे चोबाइ ॥ २२५ ॥
पकाइ दिअन्ति तळे गण्ठि हाड़मान ।
काहार बुकु बिदारि करि रक्तपान ॥ २२६ ॥
निर्जीव करि पकाइ दिअन्ति भुमिरे ।
एमन्ते महामारणी कले संग्रामरे ॥ २२७ ॥
असुर गोटिके देबी पांचशते घोटि ।
जीभ लह लह करि पकान्ति से चाटि ॥ २२८ ॥

थी। कोई बाल बिखेरकर भीषण नृत्य कर रही थी। २२० कोई धीरे-धीरे दाँत कटकटाते हुए समरांगण में नाच-नाचकर बढ़ी जा रही थी। २२१ किसी का मुख विकराल तथा नाक अत्यन्त छोटी थी। किसी के सिर पर मुकुट विराजमान था। २२२ किसी की नाभि अन्धकूप की भाँति गहरी थी। किसी के बाल उलझे हुए थे और वह आँ-आँ शब्द करके दौड़ रही थी। २२३ किसी के सिर तथा मस्तक पर बहुत से नेत्र थे। किसी के मुख में बहुत से दाँत थे। २२४ करोड़ों की संख्या में देवियों का दल दौड़ रहा था। वह असुरों को पकड़कर दाँतों से चबा रही थीं। २२५ वह हड्डियों तथा गाँठों को नीचे फेंक देती थीं। किसी की छाती चीरकर वह रक्त-पान कर रही थीं। २२६ इस प्रकार संग्राम में वह महामारी चला रही थीं तथा निर्जीव करके असुरों को पृथ्वी पर फेंक रही थीं। २२७ एक-एक असुर को पाँच सौ देवियाँ घेर लेती थीं। जीभ लपलपाकर उसे चाटकर गिरा देती थीं। २२८ दो घड़ी

एमन्ते घोर समर कले दुइ घड़ि ।
मड़ा परे अनेक जे मड़ा गले पड़ि ॥ २२९ ॥
गज अश्व व्याघ्र आदि थिले जे बहन ।
ताहांकु माइला सिंह करि गरजन ॥ २३० ॥
देखि बड़ बड़ बीरे हेले आँगुसार ।
देबींक उपरे कले नाराच प्रहार ॥ २३१ ॥
पाटि बिस्तारि समरे उठि देबीगण ।
असुर नाराचमाने गर्भकु क्षेपिण ॥ २३२ ॥
माइले खण्डा खड्ग धरि कोपभरे ।
ताहाकु मारि पकान्ति पोतिण खपरे ॥ २३३ ॥
नखे छिण्डाइ पकान्ति काहार बा अन्त ।
काहा मांस रकटन्ति लगाइण दान्त ॥ २३४ ॥
काहाकु तळे पकाइ ता छाति उपरे ।
छिड़ा होइ केउँ देबी हसि नृत्य करे ॥ २३५ ॥
काहार केश धरि के निअइ घोषाड़ि ।
केउँ देबी घोषाहोइ दिअइ फोपाड़ि ॥ २३६ ॥
धाआँ लो धाआँ लो कहि केहि हुए आग ।
आस लो आस लो कहि माए बेग बेग ॥ २३७ ॥

तब इस प्रकार घोर युद्ध चलता रहा। लाशों पर लाशों के ढेर लग गये। २२९ अश्व, हाथी, व्याघ्र आदि जो वाहन थे, उन्हें (देवी के) सिंह ने गर्जन करते हुए मार डाला। २३० यह देखकर बड़े-बड़े वीर आगे आ गये। उन्होंने देवी-दल के ऊपर बाणों से प्रहार किया। २३१ देवियों के दल ने मुँह फैलाकर युद्ध में आगे बढ़ते हुए असुरों के बाणों को अपने गर्भ में डाल लिया। २३२ असुरों ने क्रुद्ध होकर खाँड़ा और तलवारों से प्रहार किया। तब देवियों ने उन्हें खप्पर चलाकर मार गिराया। २३३ किसी की आँतें वह नाखूनों से विदीर्ण कर देती थीं। किसी के दाँत लगाकर मांस नोच लेती थीं। २३४ किसी को पृथ्वी पर गिराकर कोई-कोई देवी उस पर चढ़कर हँसती हुई नृत्य करने लगती थी। २३५ कोई बालों को पकड़कर उन्हें गिरा देती। कोई कुपित होकर उन्हें फेंक देती थी। २३६ दौड़ो-दौड़ो, कहते हुए कोई आगे निकल जाती। कोई शीघ्रता से 'आओ-आओ' कह रही थी। २३७

एमन्ते असुर दळ निपातिले जहुँ ।
दुर्गम अमृत देखि माया कला तहुँ ॥ २३८ ॥
गढ़ उड़ाइला शुन्ये आगे जे अदृश्य ।
असुर बळकु दुर्गा करिण निःशेष ॥ २३९ ॥
देवी गणंकु आपणा उदरे पुराइ ।
धाइँले गगन मार्गे दुर्गा महामाई ॥ २४० ॥
असुर गढ़कु धरि न पारन्ति केभे ।
बड़ प्रतापी दानव जाउअछि नभे ॥ २४१ ॥
गढ़र भितरे लुचि मारुअछि शर ।
कोटि कोटि लक्ष लक्ष असंख्य अपार ॥ २४२ ॥
उलुका पात पराय दिशे अन्तरीक्षे ।
दुर्गा ताहाकु छेदिले शर मारि लक्षे ॥ २४३ ॥
देखि माया बिस्तारिला प्रतापी असुर ।
दुर्गम दुर्ग अदृश्य क्षणक भितर ॥ २४४ ॥
असुरकु न पाइण देवी भगवती ।
चामुण्डा गणंकु गर्भु कले उपपत्ति ॥ २४५ ॥
बोइले आकाश पथ रोध लो तुरिते ।
चण्डीगणंकु बोइले रहि शक्ति हस्ते ॥ २४६ ॥

इस प्रकार देवियों ने असुर-दल का संहार कर डाला। तब बचे हुए दुर्गम दैत्य ने माया का विस्तार किया। २३८ वह दुर्ग को शून्य में उड़ाकर अदृश्य हो गया। दुर्गा ने असुर-दल का अन्त कर दिया था। २३९ उन्होंने देवी-दल को अपने पेट में भर लिया और महामातेश्वरी दुर्गा आकाश-मार्ग की ओर दौड़ पड़ीं। २४० वह असुर-दुर्ग को नहीं पकड़ पा रही थीं। अत्यन्त प्रतापी दैत्य आकाश में जा रहा था। २४१ दुर्ग के भीतर छिपकर वह बाणों से प्रहार कर रहा था। वह करोड़ों प्रकार के असंख्य बाण चला रहा था। २४२ अन्तरिक्ष में उल्कापात-जैसी स्थिति दिख रही थी। दुर्गा ने उसे एक लाख बाणों से छेद दिया। २४३ यह देखकर प्रतापी दैत्य ने माया का विस्तार किया। दुर्गम दैत्य का गढ़ एक क्षण में ही अदृश्य हो गया। २४४ भगवतीदेवी ने असुर को न देखकर अपने गर्भ से चामुण्डा-दल को उत्पन्न किया। २४५ उन्होंने चामुण्डा-दल से हाथों में शक्ति लेकर तुरन्त ही आकाश-मार्ग को अवरुद्ध करने के लिए कहा। २४६ उन्होंने कहा कि असुर को पृथ्वी पर जाने का मार्ग

महीकि बाट न छाड़ि दिअ असुरकु ।
काळीकि बोइले जग पाताळकु ॥ २४७ ॥
चउद भुबन जाक घोंट जाइ बेगे ।
समस्ते खपर पाति थिब आगे आगे ॥ २४८ ॥
कराळीकि बोइले तु दाढ़थिबु पाति ।
कंकाळीकि बोइले तु पतिथिबु काति ॥ २४९ ॥
बइष्णबीकि बोइले चक्र करे धरि ।
शुन्ये भ्रमुथिबु कुम्भकार चक्रपरि ॥ २५० ॥
कुमार्त कि बोइले तु पास नेइ पाश ।
एमन्त दुर्गाक ठारु पाइण आदेश ॥ २५१ ॥
घोटिले आकाश जाक देबीगण जाइँ ।
जेसने प्रळयमेघ आकाश घोटइ ॥ २५२ ॥
जळ स्थळ पाताळरे जगिले जोगिनी ।
बन पर्बते रहिले खपरकु घेनि ॥ २५३ ॥
ग्रामे ग्रामे देशे देशे रहि महामाई ।
असुर जिबाकु बाट काहिँ तिळे नाहिँ ॥ २५४ ॥
दुर्गम असुर देखि होइण ताटका ।
गढ़ मध्यरे दानब रहिअछि एका ॥ २५५ ॥

मत दो। काली को उन्होंने पाताल की रक्षा करने का आदेश दिया। २४७ फिर बोलीं कि शीघ्र ही चौदह भुवनों को घेर लो। सब खप्पर चलाते हुए आगे बढ़ो। २४८ कराली को दाढ़ों से और कंकाली को काँती से प्रहार करने को कहा। २४९ वह वैष्णवी से बोलीं कि तुम हाथ में चक्र लेकर कुम्हार के चाक के समान घूमती हुई आकाश में भ्रमण करो। २५० कुमार्त को पाश चलाने के लिए कहा। इस प्रकार दुर्गा का आदेश पाकर देवी-दल जाकर सारे आकाश में छा गया, जिस प्रकार प्रलयकाल के बादल नभ-मण्डल को आच्छादित कर लेते हैं। २५१-२५२ जल, स्थल और पाताल की पहरेदारी योगिनियाँ कर रही थीं। वे खप्पर लेकर वन तथा पर्वतों पर विचरण कर रही थीं। २५३ ग्राम-ग्राम, नगर-नगर में महामाया विचरण कर रही थी। असुर को जाने के लिए तिल मात्र भी मार्ग नहीं था। २५४ दुर्गमासुर यह देखकर अवाक् रह गया। दुर्ग में केवल वह ही बचा था। २५५ किसी समय

केते बेळे दृश्य होइ नाराच मारइ ।
केते बेळे मायागढ़े अदृश्य हुअइ ।। २५६ ।।
देबे सेहि गढ़मध्ये होइछन्ति बन्दी ।
आसि न पारन्ति मायागढ़ गोटा भेदि ।। २५७ ।।
असुर तहिँ करइ नाराच प्रहार ।
केते बेळे शूळ शक्ति मुषळ मुद्गर ।। २५८ ।।
दुर्गा दानव आयुधमान बाणे छेदि ।
माया दुर्गकु कदापि न पारन्ति भेदि ।। २५९ ।।
एमन्ते हेला समर सहस्रे बरष ।
सिंहकु बोइले तुहि गढ़ डेइँ पश ।। २६० ।।
महाबळ सिंह तार न पाइला अन्त ।
देखि महाकोपे देबी करे धरि कुन्त ।। २६१ ।।
फोपाड़िले दुर्ग भांगि हेला खण्ड-खण्ड ।
देखिण दानब भये हेला लण्ड-भण्ड ।। २६२ ।।
पळाइ जिबाकु मन कला से असुर ।
देखे चउद ब्रह्माण्ड जाक भयंकर ।। २६३ ।।
जिबा पाइँ बाट जहुँ न पाइला सेहि ।
धनु धरिण नाराच बिन्धिलाक रहि ।। २६४ ।।

प्रकट होकर वह बाण चलाता और किसी समय मायागढ़ में अदृश्य हो जाता था । २५६ उसी दुर्ग में देवता लोग बन्दी थे । वह मायागढ़ को भेदकर आ नहीं पा रहे थे । २५७ वहीं से दैत्य बाणों से प्रहार कर रहा था । कभी शूल, कभी मुग्दर, कभी शक्ति, कभी मूषल से प्रहार करता था । २५८ दानव के आयुधों को दुर्गा बाणों से काट देती परन्तु मायागढ़ का भेदन नहीं कर पा रही थी । २५९ इस प्रकार का युद्ध एक हजार वर्षों तक चलता रहा । उन्होंने सिंह से कूदकर गढ़ में प्रविष्ट होने को कहा । २६० महान पराक्रमी सिंह को उसका अन्त नहीं मिला । यह देखकर देवी हाथ में कुन्त लेकर महान कुपित हुई । २६१ उन्होने दुर्ग पर कुन्त फेंक दिया । वह गढ़ टूटकर खण्ड-खण्ड हो गया । यह देखकर दानव भय से किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया । २६२ उस दैत्य ने भाग जाने की इच्छा की । उसे पूरे चौदह ब्रह्माण्ड भयंकर लगे । २६३ जब उसे भागने के लिए मार्ग नहीं मिला तो उसने वहीं रहकर धनुष उठाकर बाण चलाये । २६४ देवी-दल रक्त से लथपथ हो गया । दुर्गादेवी ने

रुधिररे जर जर हेले देबीगणे ।
दुर्गा देबी दानबर गढ़भांगि बाणे ।। २६५ ।।
देवतामानंकु तहुँ देले मुकुळाइ ।
असुर आगे बिजये सिंह पृष्ठे थाइ ।। २६६ ।।
बोइले दानब आरे जिबु आजि काहिँ ।
मृत्यु देवता पाखकु अइलाणि धाइँ ।। २६७ ।।
एहि क्षणि तोते धरि करिब से ग्रास ।
बन्दि करि रखिथिलु तु परा त्रिदश ।। २६८ ।।
माया तोहर केणिकि गलारे पामर ।
तुहि परा बळबन्त अटु महाबीर ।। २६९ ।।
बेगे तु आयुधधर न करिण भीति ।
देबीर मुखु एमन्त शुणि से दुर्मति ।। २७० ।।
बोइला गर्ब न कर मो आगरे तुहि ।
आन असुर पराय नुहइ जे मुहिँ ।। २७१ ।।
मुहिँ सिंह तुहि सिना अटु लो शृगाळी ।
एहि क्षणि रणे देबि तोते बिषावळि ।। २७२ ।।
जेबे जीवनकु आशा अछइ तोहर ।
मोहर भारिजा होइ कर तू लो घर ।। २७३ ।।
नोहिले समर कर नाहिँ मोर भीति ।
एमन्त कहि नाराच बिन्धिला दुर्मति ।। २७४ ।।

बाण से दुर्ग को नष्ट करके देवताओं का उद्धार किया तथा वह सिंह-पृष्ठ पर आरूढ़ होकर असुर के समक्ष उपस्थित हुई । २६५-२६६ वह बोलीं, अरे दानव ! आज तू कहाँ जाएगा ? मृत्यु के देवता दौड़कर तेरे पास आ गये हैं । २६७ वह तुझे इसी क्षण पकड़कर खा लेंगे । तूने ही देवताओं को बन्दी बना लिया था । २६८ अरे नीच ! तेरी माया कहाँ चली गयी ? तू तो महान पराक्रमी और बलवान है । २६९ तू निर्भय होकर शीघ्र ही शस्त्र उठा ले । देवी के मुख से इस प्रकार सुनकर वह दुर्बुद्धि बोला, तू मेरे आगे घमण्ड मत कर । मैं दूसरे दैत्यों के समान नहीं हूँ । २७०-२७१ मैं सिंह हूँ और तू शृगाली है । इसी समय रण में तेरी बलि दे दूँगा । २७२ यदि तुझे जीवित रहने की इच्छा हो तो मेरी स्त्री बनकर घर बसा ले । २७३ नहीं तो युद्ध कर । मुझे कोई भय नहीं है । इस प्रकार कहते हुए उस दुर्बुद्धि ने बाण छोड़ दिया । २७४

दुर्गा असुर नाराच पकाइले छेदि ।
देखि दानव कोपरे आन बाण सन्धि ॥ २७५ ॥
न आसुणु देबी ताहा छेदि पकाइले ।
आवर असुर हस्तु धनुकु छेदिले ॥ २७६ ॥
देखि प्रतापी दनुज धइला शकति ।
सिंहशिरे प्रहारिला करि बेगगति ॥ २७७ ॥
मुर्छा जाइ महासिंह पड़िला भुमिरे ।
शकति गोटाकु देबी काटिले सत्वरे ॥ २७८ ॥
देखि कोपे शूळधरि धाइँला दानब ।
महा भयंकर बपु दारुण स्वभाव ॥ २७९ ॥
जमर उपरे किबा अटइ से जम ।
आसुअछि दुरांतक होइ तम तम ॥ २८० ॥
महा माया शूळ गोटा पकाइले काटि ।
निशस्त्र होइ दानब प्रहारिले मुष्टि ॥ २८१ ॥
देवीक छातिरे कोपे प्रहारिले दैत्य ।
महाकोपे महामाया हेले प्रज्वळित ॥ २८२ ॥
महाभइरव मूर्ति प्रकाशिले तहिँ ।
घोटिले पाताळ स्वर्ग अन्तरीक्ष मही ॥ २८३ ॥

दुर्गा ने दैत्य के बाण को काटकर गिरा दिया। यह देखकर दानव ने क्रुद्ध होकर अन्य बाण छोड़ा। २७५ उसके आने के पहले ही देवी ने उसे काट फेंका तथा असुर के हाथों वाले धनुष को काट डाला। २७६ यह देख प्रतापी दैत्य ने शक्ति उठा ली तथा तीव्र गति से सिंह के शिर पर प्रहार कर दिया। २७७ महान सिंह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तभी देवी ने शक्ति को शीघ्रता से काट डाला। २७८ यह देख कुपित होकर दानव शूल लेकर दौड़ा। उसका शरीर अत्यन्त भयकारी और स्वभाव बहुत ही क्रूर था। २७९ तमतमाकर आता हुआ दुर्दान्त असुर यम का भी यमराज प्रतीत हो रहा था। २८० महामाया ने शूल को भी काट गिराया। निःशस्त्री होने पर दानव ने मुष्टि-प्रहार किया। २८१ दैत्य ने देवी के वक्षस्थल पर कुपित होकर मुष्टि से प्रहार किया। तब महामाया अत्यन्त क्रोध से प्रज्वलित हो उठी। २८२ उसने अत्यन्त भयंकर रूप धारण करके पृथ्वी, स्वर्ग, पाताल तथा अन्तरिक्ष को आच्छादित कर लिया। २८३ महान भयकारी रूप आकाश में व्याप्त हो गया।

महाभयंकर रूप व्यापिला गगन ।
बिकटाळ दीर्घदन्त कराळ बदन ।। २८४ ।।
तारा प्राय बिराजन्ति नेत्र कोटि कोटि ।
कोटि कोटि रूप अछि ब्रह्माण्डकु घोटि ।। २८५ ।।
कोटि कोटि भुजे अछि कोटि कोटि बाण ।
कोटि कोटि ब्रह्माण्डकु घोटिछि चरण ।। २८६ ।।
देखि महा भय पाइ दुर्गम असुर ।
मायारे हेला से पुणि दुर्गम आकार ।। २८७ ।।
माड़ि बसिले ताहाकु देबी बिश्वरूपे ।
शूळ प्रहारिले तार उरे महा कोपे ।। २८८ ।।
गर्जिला दइत सिन्धु गरजिला परि ।
कम्पिले सपत द्वीप मही अष्टगिरि ।। २८९ ।।
आकाश कि भांगि तळे पड़िला कि आसि ।
कि अबा पृथिबि जिब रसातळे लसि ।। २९० ।।
एमन्त देखिण दुर्गादेबी कोपभरे ।
पुणि शूळ प्रहारिले असुर उदरे ।। २९१ ।।
प्राण छाड़ि महासुर गला जम घर ।
देखि आनन्द होइले ब्रह्मा बिष्णु हर ।। २९२ ।।

उसके विकराल मुख में बड़े-बड़े भयकारी दाँत थे । २८४ उसके करोड़ों नेत्र नक्षत्र-मण्डल के समान विराजमान थे । उसके करोड़ों रूपों से ब्रह्माण्ड भर गया । २८५ उसकी करोड़ों भुजाओं में करोड़ों बाण थे । उसके करोड़ों चरणों से करोड़ों ब्रह्माण्ड भर गये । २८६ यह देखकर दुर्गमासुर अत्यन्त भयभीत हो गया । माया के बल से पुनः उसने दुर्गम आकार धारण कर लिया । २८७ विराटकाय देवी उस पर चढ़ बैठी और अत्यन्त कुपित होकर उन्होंने उसकी छाती पर शूल से प्रहार किया । २८८ सागर के समान दैत्य गरज उठा । सातों द्वीपों से युक्त पृथ्वी और आठों पर्वत काँप उठे । २८९ ऐसा लगता था मानों आकाश टूटकर नीचे गिरपड़ा हो अथवा पृथ्वी रसातल में धँस गयी हो । २९० यह देख क्रुद्ध होकर देवी दुर्गा ने पुनः असुर के पेट पर शूल से प्रहार किया । २९१ प्राण त्यागकर महान दैत्य यमपुर चला गया । यह देखकर ब्रह्मा, विष्णु और शिव आनन्दित हो गये । २९२ समस्त देवताओं ने हाथ जोड़कर स्तुति की ।

जय जय शबदरे पुरिला आकाश ।
कर जोड़ि स्तुति कले सकळ त्रिदश ॥ २९३ ॥
जयतु जयतु मा गो अनंत रूपिणी ।
जयतु जयतु मा गो दनुज दळिनी ॥ २९४ ॥
जयतु जयतु मा गो अनादि अपर्णा ।
जयतु जयतु मा गो आदिमाता पूर्णा ॥ २९५ ॥
बारे बारे आम्भठारे कृपा करि मात ।
दुर्दान्त दनुज बळ करु गो निपात ॥ २९६ ॥
महिषासुर जे थिला सत्यजुगे पुणि ।
एड़े प्रताप न थिला तार गो सामणि ॥ २९७ ॥
शुम्भ निशुम्भ आबर चामर बेमाळ ।
रक्तबीर्य चण्ड मुण्ड बीर कान्तिमाळ ॥ २९८ ॥
महाहनु महाकाय बिक्षुर असुर ।
उग्रायुध तारक जे रन्धक आबर ॥ २९९ ॥
बिप्रचित्त हिरणाक्ष हिरण्यकशिपु ।
एमन्त बहुत दैत्य थिले देवरिपु ॥ ३०० ॥
केहि एमन्त प्रतापी न थिले गो मात ।
एहार माया बिष्णुहँ होइला अनन्त ॥ ३०१ ॥
दारुण दुर्गमासुर माइलु तु हेळे ।
एहि दुर्गा नाम तोर रहु काळे काळे ॥ ३०२ ॥

जय-जय के शब्द से आकाश व्याप्त हो गया । २९३ हे अनन्तरूपिणी माँ तुम्हारी जय हो ! जय हो ! दानवों का दलन करनेवाली माँ ! तेरी ज हो ! जय हो ! २९४ आदिरहित अपर्णा माँ ! तेरी जय हो ! ज हो ! हे आदिमाता पूर्णा ! तेरी जय हो ! जय हो ! २९५ हे माँ तू बारम्बार हम पर दया करके दुर्दान्त दानव-दल का संहार कर दे है । २९६ सतयुग में जो महिषासुर था, हे मातेश्वरी ! वह भी इत प्रतापी नहीं था । २९७ शुम्भ, निशुम्भ, चामर, बेमाल, रक्तबीर्य, च मुण्ड तथा पराक्रमी कान्तिमाल । २९८ महाहनु, महाकाय, विक्षुरा उग्रायुध, तारक तथा अन्धक । २९९ बिप्रचित्त, हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकशि इस प्रकार बहुत से दैत्य देवताओं के शत्रु थे । ३०० परन्तु हे माता ! न ... इतना प्रतापी नहीं था । विष्णु के लिए भी इसकी माया अनन्त ... तूने खेल-खेल में क्रूर दुर्गमासुर का संहार कर डाल

एहि बर मागुअछु तोते आदिमाता।
दुर्गा नाम सुमरिले छाड़ि जिब चिन्ता ॥ ३०३ ॥
प्रभातरे दुर्गा दुर्गा कहिब जे जन।
ताहार दुःख दुरित होइब मोचन ॥ ३०४ ॥
दुर्गापूजा करिब जे धूप दीप देइ।
अचळाचळ सम्पत्ति देबु महामाई ॥ ३०५ ॥
दुर्गा नाम गोटि तोर दुर्गति नाशिब।
दुर्गा नाम गोटि तोर सर्व कार्य्य शुभ ॥ ३०६ ॥
दुर्गा नाम गोटि हेउ बिपद कतुरी।
दुर्गा नाम गोटि हेउ नाम मध्य शिरी ॥ ३०७ ॥
दुर्गा नाम गोटि हेउ नाम मध्ये सार।
सुदया करि गो मात दिअ एहि बर ॥ ३०८ ॥
हेउ कहि अन्तर्धाने गले महामाई।
चक्रधर बोले दुर्गा दुर्गा बोल भाइ ॥ ३०९ ॥

बहुशिरा जन्म ओ बहुशिरा बध एवं बहुशिरा द्वीप निर्माण

शंकर कहन्ति देबी पार्वती गो शुण।
परम पवित्र ए बिलंका रामायण ॥ १ ॥

तेरा यही दुर्गा नाम सदा-सदा के लिए रह जाय। ३०२ हे आदिमाता! हम लोग तुझसे यही वर माँग रहे हैं। दुर्गा नाम का स्मरण करने से चिन्ताएँ छूट जाएँ। ३०३ जो भी व्यक्ति प्रातःकाल दुर्गा-दुर्गा कहेगा उसके दुःख और दारिद्र नष्ट हो जाएँगे। ३०४ जो कोई धूप-दीप द्वारा दुर्गा की पूजा करे; हे महामातेश्वरी! तुम उसे चल और अचल सम्पत्ति प्रदान करना। ३०५ तेरा दुर्गा नाम दुर्गति को नष्ट कर दे। तेरे एक मात्र दुर्गा नाम से सारे कार्य मंगलकारी हो जाएँ। ३०६ तेरा दुर्ग नाम विपत्ति को काटने की कतरनी बन जाय। समस्त नामों के अध्य एक दुर्गा नाम ही श्रेष्ठ हो जाय। ३०७ अन्य नामों में दुर्गा नाम ही सारयुक्त हो जाय। हे माँ! दया करके हमें यह वर प्रदान करें। ३०८ "ऐसा ही हो" कहकर महामाई अन्तर्धान हो गयीं। चक्रधर कहता है कि हे भाइयो! तुम भी दुर्गा! दुर्गा! बोलो। ३०९

बहुशिरा का जन्म, युद्ध तथा बध एवं बहुशिरा-द्वीप-निर्माण

शंकर जी बोले, हे देवी पार्वती! सुनो। यह बिलंका रामायण

उत्तरकाण्ड चरित जे जण शुणिब ।
ग्रामे ग्रामे घरे घरे अबा शुणाइब ।। २ ।।
तरिब तारिब भव पाराबारु जाण ।
राम नामामृत रस कर तु गोपन ।। ३ ।।
दुर्गम असुर जहुँ जमपुर गला ।
तार मृत शब जाइ समुद्रे पड़िला ।। ४ ।।
लवणसागरे जळ पड़िला उछुळि ।
केते जळजन्तु मले के पारिब कळि ।। ५ ।।
देवतामाने आनन्दे कलेक उत्सव ।
अमरावती पुरकु साजिले बासब ।। ६ ।।
सभा करि गीत नृत्य आरम्भिले तहिँ ।
महा आनन्द होइला चराचर मही ।। ७ ।।
एथु अनन्तरे कथा शुण शाकम्बरी ।
असुरर थिला एक नवजुबा नारी ।। ८ ।।
रूपे कि से रतिदेबी रम्भा अपसरा ।
जुब जनमानंकर नयन पसरा ।। ९ ।।
शिराळजंघ दुहिता अति सुकुमारी ।
नव मास गर्भ होइथिला जे ताहारि ।। १० ।।

अत्यन्त पवित्र है । १ जो व्यक्ति उत्तरकाण्ड के चरित्र को सुनेगा अथवा गाँव-गाँव, घर-घर में सुनाएगा; वह स्वयं तो तरेगा ही दूसरों को भी संसार-सागर से तार देगा । यह समझकर तुम राम-नाम-रसामृत को आत्मसात् कर लो । २-३ जब दुर्गमासुर यमलोक चला गया और उसका मृत शरीर जाकर समुद्र में गिरा । ४ तब लवणसिन्धु का जल उछल पड़ा । कितने ही जलचर जीवों का विनाश हो गया, जिसे कौन गिन सकेगा । ५ इन्द्र ने स्वर्गलोक को सुसज्जित कराया तथा देवताओं ने आनन्दोत्सव मनाये । ६ सभा एकत्रित करके वहाँ गीत-नृत्यादि प्रारम्भ हो गये । पृथ्वी पर चराचर जगत में महान प्रसन्नता छा गयी । ७ हे शाकम्बरी ! इसके पश्चात की बात सुनो । उस असुर की एक नवयौवना स्त्री थी । ८ वह रूप-लावण्यता में रति एवं रम्भा अप्सरा के समान युवक व्यक्तियों के नेत्रों की निधि थी । ९ वह अत्यन्त सुकुमारी शिरालजंघ की कन्या थी, जिसके नौ मास का गर्भ था । १० दुर्गमासुर का मंत्री

दुर्गम असुर मंत्री कळपा असुर ।
ताहाकु से घेनि गला पाताळ नगर ।। ११ ।।
आपणा पुर रे ताकु रखिला जतने ।
पुत्र जात कला दश मास दश दिने ।। १२ ।।
से दिन रजनी काळे हेला पुत्र जात ।
बिष्टिनामे करण जे जोग व्यतिपात ।। १३ ।।
उत्तम बार विशेषे चतुर्थी जे तिथि ।
श्रावण मास ककड़ा घरे संकरान्ति ।। १४ ।।
जनम बेळे कुमर देला घोर रड़ि ।
कि अबा प्रळयकाळ मेघ बड़घड़ि ।। १५ ।।
बहुत मुण्ड ताहार देखि माड़े डर ।
बहुत कर चरण होइछि आबर ।। १६ ।।
देखि मंत्रीवर ताकु बिचारिला मने ।
एमन्ते अद्भुत पुत्र जन्मिला केसने ।। १७ ।।
बिधातार गति केहू जाणिब केमन्ते ।
एमन्त भाळि कळपा आपणार चित्ते ।। १८ ।।
पाळिला से पुत्र गोटि अति जत्न करि ।
बहुशिरा बोलि नाम रखिला ताहारि ।। १९ ।।
एमन्त शुणि बोइले देवी जे पार्वती ।
बड़ सन्देह मो मने जात पशुपति ।। २० ।।

कल्पासुर उसे लेकर पातालपुरी में चला गया । ११ उसने उसे अपने घर में यत्नपूर्वक रखा । दस मास और दस दिनों में उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । १२ जिस दिन रात्रि में उसके पुत्र पैदा हुआ, तब विष्टि नाम करण में व्यतिपात योग था । १३ उत्तम दिन की विशिष्ट चतुर्थी में श्रावण के महीने में संक्रान्ति कर्कराशि में स्थित थी । १४ पैदा होने के समय बालक ने भीषण गर्जन किया, लगता था मानों प्रलयकाल के बादल गर्जन कर रहे हों । १५ उसके बहुत से पैर, बहुत से हाथ और बहुत से शिर हो जाने के कारण देखकर बड़ा डर लग रहा था । १६ उसे देखकर मंत्री ने अपने मन में विचार किया कि इस प्रकार का अद्भुत बालक कैसे उत्पन्न हो गया । १७ दैव की गति कोई कैसे जान सकता है । इस प्रकार से कल्पासुर ने अपने मन में विचारकर बड़े यत्न के साथ बालक का लालन-पालन किया तथा उसका नाम बहुशिरा रखा । १८-१९ ऐसा सुनकर

एमन्त कुमार किम्पा होइला ताहार।
केमन्ते फाटि न गला ताहार उदर॥ २१ ॥
एमन्त अद्भुत रूप से बाळक धरि।
केमन्त जनम हेला कह शूळधारी॥ २२ ॥
शुणि देब सदाशिव बोइले गउरी।
बड़ सन्धि कथामान पारु तु पचारि॥ २३ ॥
शिराळजंघ नामरे एकइ असुर।
बड़ प्रतापी दइत बुले एकेश्वर॥ २४ ॥
काहाकु ताहार भीति नाहिँ तिनि पुरे।
दिने सेहि जाउथिला श्वेतगंगा तीरे॥ २५ ॥
मदनकळा वेश्याकु देखिला से तहिँ।
स्नान करि सारि बाळी कूळे अछि रहि॥ २६ ॥
एकेत से बारनारी सर्वांग सुन्दरी।
शुद्ध स्नान सारि कूळे उभा सुकुमारी॥ २७ ॥
बळे ताकु धरि कोळ कलाक असुर।
एकेत जुबा पुरुष बळिष्ठ आबर॥ २८ ॥
सेहि बेश्या गर्भु जात हेला एक बाळी।
ताहाकु तेजि से बेश्या स्वर्गे गला चळि॥ २९ ॥

देवी पार्वती ने कहा, हे पशुपति ! मेरे मन में महान सन्देह उत्पन्न हो रहा है। २० इस प्रकार का बालक उससे किस प्रकार उत्पन्न हुआ ? उसका पेट कैसे फट नहीं गया ? २१ हे शूलधारी ! आप बताइए कि बालक इस प्रकार का आश्चर्यमय रूप धारणकर कैसे उत्पन्न हुआ ? २२ यह सुनकर सदाशिव बोले, हे गौरी ! यह बड़ी रहस्यमयी कथा तुमने पूछी है। शिरालजंघ नाम का एक अत्यन्त प्रतापी असुर था, जो स्वयं को सामर्थ्यवान समझ अकेले ही घूमा करता था। २३-२४ तीनों लोकों में उसे किसी से भय नहीं था। एक दिन वह श्वेतगंगा के किनारे चला जा रहा था। २५ उसने वहाँ पर मदनकला नामक वेश्या को देखा। वह कामिनी स्नान करके तट पर खड़ी थी। २६ एक तो वह सर्वाङ्ग सुन्दरी स्त्री वेश्या थी और फिर शुद्ध स्नान करके कोमलांगी तट पर खड़ी थी। २७ असुर ने बलपूर्वक उसे छाती से लगा लिया। एक तो वह युवा पुरुष था और बलशाली भी। २८ उसी वेश्या के गर्भ से एक बालिका उत्पन्न हुई। उसे छोड़कर वह वेश्या स्वर्ग को चली गयी। २९ असुर ने अपने घर में यत्नपूर्वक उसका लालन-पालन किया। युवती होने

असुर ताहाकु जत्ने पाळिला ता घरे।
जुबती हुअन्ते ताकु घेनि संगतरे ॥ ३० ॥
पाताळपुरु बाहार होइला असुर।
दुहिता पाइँ मनरे खोजुथाइ बर ॥ ३१ ॥
रूपबन्त गुणबन्त पाइले से देब।
एमन्त भाळि पृथ्वीरे भ्रमइ दानब ॥ ३२ ॥
बाळखिल्या तपोबने मिळिला से जाइ।
दुहिता सेहि आश्रम गोटिकु देखइ ॥ ३३ ॥
एकेत जुबती पुणि दानबनन्दिनी।
अतिगेल्हारे बढ़िछि बाप घरे पुणि ॥ ३४ ॥
मातृहीना देखि गेल्हा करइ असुर।
एकेत से कन्या गोटि परम सुन्दर ॥ ३५ ॥
मुनिर आश्रम देखि हरष ता मति।
बाळखिल्या ऋषिगण आश्रमे नाहान्ति ॥ ३६ ॥
समिधि निमन्ते जाइछन्ति घोर बने।
कन्या रतन आश्रम देखिण नयने ॥ ३७ ॥
जाउअछि बने बने गेल गेल होइ।
केउँ गच्छरु कुसुम आगइ छिण्डाइ ॥ ३८ ॥

पर वह असुर उसे साथ लेकर पातालपुरी से बाहर निकला। वह मन लगाकर पुत्री के लिए वर खोज रहा था। ३०-३१ रूपवान तथा गुणवान पाने से ही वह समर्पित करेगा। इस प्रकार का विचार करके दानव पृथ्वी पर विचरण कर रहा था। ३२ वह बालखिल्य-तपोवन में जा पहुँचा। पुत्री उस आश्रम को देखने लगी। ३३ एक तो नवयौवना, फिर दानव-कुमारी और फिर अपने पिता के घर में वह बड़े लाड़-प्यार से पली थी। ३४ माता से विहीन देखकर असुर उससे प्यार करता था। एक तो वह कन्या थी, फिर अत्यन्त सुन्दरी भी। ३५ मुनि-आश्रम देखकर उसका मन प्रसन्न हो गया। बालखिल्य ऋषि-मण्डल आश्रम में नहीं था। ३६ समिधा लाने के लिए वह घोर जंगल में गये थे। कन्यारत्न उस आश्रम को अपने नेत्रों से देखते हुए जंगल-जंगल अठखेलियाँ करते हुए चली जा रही थी। वह किसी वृक्ष से फूल तोड़ लाती थी। ३७-३८ मृग-दल को देखकर उनके पीछे-पीछे जाती और फिर उन्हें पकड़ने के लिए

मृगदल देखि तांक पच्छे पच्छे जाइ ।
धरिबा निमन्ते बाळी करकु बढ़ाइ ॥ ३९ ॥
खण्डे दुरु पुणि फेरि आसइ से बाळी ।
शरधारे केउँ वृक्षु फळ आणे तोळि ॥ ४० ॥
ताहाकु कामुड़ि दान्ते दिअइ पकाइ ।
एमन्ते जाउअछि से गेल्हाइ गेल्हाइ ॥ ४१ ॥
बाळखिल्या ऋषिगण समिध मुण्डाइ ।
बन मध्यरु आसन्ति लण्डभण्ड होइ ॥ ४२ ॥
साठिए सहस्र जाण बाळखिल्या ऋषि ।
अंगुष्ठ मात्र पुरुष आगो शुभ्रकेशी ॥ ४३ ॥
काठ मुण्डे घेनि बाटे आसन्ति तुरिते ।
बेळ उछुर हेबारु अगम्य बनस्ते ॥ ४४ ॥
देखितांकु से सुन्दरी नाके हाथ देइ ।
उपहास कला अति आचम्भित होइ ॥ ४५ ॥
जउबन गर्भे तांकु कहिण इंगिते ।
बाट ओगाळिला बाळी गेल्हा होइ पथे ॥ ४६ ॥
कोपे ऋषिगण ताकु देले अभिशाप ।
उपहास कला बाळी देखि आम्भ रूप ॥ ४७ ॥
बिधाता जाहाकु गढ़ि अछि जेउँ रूपे ।
काहाकु सानकाहाकु बड़ करि थापे ॥ ४८ ॥

दानव-दुहिता हाथ बढ़ा देती थी । ३९ थोड़ी दूर जाकर कुमारी फिर लौट आती थी । ललचाकर किसी वृक्ष से फल तोड़ लाती थी और उसे दाँतों से काटकर फेंक देती थी । इस प्रकार वह चपलता करती हुई चली जा रही थी । ४०-४१ बालखिल्य ऋषि-मण्डल समिधा शिर पर रखे हुए जंगल से थकाहारा चला आ रहा था । ४२ हे सुकेशी ! अंगुष्ठ-मात्र शरीरधारी वह साठ हजार बालखिल्य ऋषि थे । ४३ अगम्य वन में देर हो जाने के कारण वह काष्ठ शिर पर लादे हुए रास्ते से शीघ्रता-पूर्वक चले आ रहे थे । ४४ उन्हें देखकर उस सुन्दरी ने आश्चर्यचकित होकर हाथ अपनी नाक पर लगाकर बड़ा उपहास किया । ४५ यौवन-गर्भित इंगन करती हुई उस दानव-कन्या ने दुलराकर चलते हुए उनकी राह रोक ली । ४६ कुपित होकर ऋषियों ने उसे शाप दे दिया । इस बाला ने हमारे रूप को देखकर उपहास किया है । ४७ विधाता ने जिसे जिस

काहाकु सुन्दर करे काहाकु कुत्सित ।
काहार बा दुइ हस्त कार बहु हस्त ।। ४९ ।।
काहार गोटाए शिर काहार द्विशिर ।
रूप जउबन बाळी थिबार तोहर ।। ५० ।।
उपहास करि बाट ओगालु आम्भकु ।
एमन्ते हसिबे लोके देखि तो पुत्रकु ।। ५१ ।।
तो बंशरे पुत्र हेब जेते जाण बाळि ।
बहुत शिर होइब उपहास भळि ।। ५२ ।।
एमन्ते ताहाकु शाप देइ ऋषिगण ।
आगकु आगकु पुणि बढ़ान्ति चरण ।। ५३ ।।
महाभय पाइ सेहि दानब नन्दिनी ।
मुनिक पादे पड़िण कलाक दयिनी ।। ५४ ।।
न जाणिबा पणे मुहिँ करिअछि दोष ।
क्षमाकर अपराध मनु तेजि रोष ।। ५५ ।।
मुहिँ त अबळा पुणि अळप बयसी ।
मो ठारे करुणाकर मुहिँ महादोषी ।। ५६ ।।
एमन्ते बहुत रूपे कहिला असुरी ।
बोइला जे कोप शान्ति कर तपचारी ।। ५७ ।।

रूप में निर्मित किया है। किसी को छोटा और किसी को बड़ा बनाकर स्थापित कर देता है। ४८ किसी को सुन्दर और किसी को कुरूप। किसी के दो हाथ और किसी के बहुत। ४९ किसी के एक शिर और किसी के दो शिर (उसने बनाये हैं)। अरी बालिके! अपने रूप तथा यौवन के कारण तूने उपहास करते हुए बाट में हमें छेड़ा है। इसी प्रकार तेरे पुत्र को देखकर लोग हँसेंगे। ५०-५१ अरी बालिके! तेरे वंश में जितने भी पुत्र उत्पन्न होंगे उनके उपहास योग्य बहुत से शिर होंगे। ५२ इस प्रकार उसे शाप देकर ऋषियों के पैर आगे बढ़ते जा रहे थे। ५३ उस दानब-कन्या ने अत्यन्त भयभीत होकर, ऋषियों के पैरों में गिरकर आर्तप्रार्थना की। ५४ अनजान के कारण मुझसे अपराध हो गया है। आप लोग चित्त से क्रोध त्यागकर मेरे अपराध को क्षमा करें। ५५ मैं अल्पवयसी अबला हूँ। मैं महान अपराधिनी हूँ। मुझ पर दया करें। ५६ इस प्रकार असुर-कन्या ने बड़ी प्रार्थना की। वह बोली, हे तपस्वी ऋषियो! आप अपने क्रोध को शान्त करें। ५७ ऋषियों ने कहा

आम्भे जाहा कहिलु ता नोहिब जे आन ।
अवश्य तो गर्भु जात होइब नन्दन ।। ५८ ।।
जात हेला मात्रे तार हेब बहु शिर ।
दुइ गोटि पाद दुइ गुण हेब कर ।। ५९ ।।
तो ठारु जे जात हेब से हेब से परि ।
एमन्ते तो बंश हेब जाण सुकुमारी ।। ६० ।।
अवश्य तु लोकहसा होइबु ता पाइँ ।
प्रसन्न कलु आम्भकु जेणु तुहि कहि ।। ६१ ।।
बळबन्त होइबे जे तोहर नन्दने ।
तिनि पुरकु जिणिबे बळबन्त पणे ।। ६२ ।।
कमाचारी होइबे से बोलाइबे बीर ।
बज्रहुँ अंग कठिन होइब तांकर ।। ६३ ।।
जळ स्थळ अनळरे नोहिबे बिनाश ।
बड़ प्रतापी होइबे स्वभाव राक्षस ।। ६४ ।।
गिरि प्राय मोटा हेब अति महाकाय ।
ताहांकु देखि सकळे करिबे जे भय ।। ६५ ।।
अति दारुण प्रकृति होइब तांकर ।
सकळ जीव जंतुंकु करिबे आहार ।। ६६ ।।

कि हमने जो कह दिया, वह मिथ्या नहीं हो सकता। तुम्हारे गर्भ से अवश्य ही बालक उत्पन्न होगा। ५८ पैदा होते ही उसके बहुत से शिर हो जाएँगे। उसके दो पैर और उसके दुगुने हाथ होंगे। ५९ तुमसे जो भी पैदा होगा वह इसी प्रकार का होगा और हे सुकोमलांगी! तेरा बंश इसी प्रकार का होगा। ६० उसके लिए तेरी जगहँसाई निश्चित रूप से होगी। फिर तुमने प्रार्थना करके हम लोगों को प्रसन्न कर लिया है, इस कारण तेरे पुत्र बलवान होंगे। अपने पुरुषार्थ से वह तीनों लोकों को जीत लेंगे। ६१-६२ वह इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले होंगे। वीर कहलाएँगे। उनके अंग बज्र से भी कठोर होंगे। ६३ जल में, थल में और अग्नि में उनका विनाश नहीं होगा। वह बड़े प्रतापी तथा स्वभाव से राक्षस होंगे। ६४ वह विशालकाय पर्वत के समान स्थूल होंगे। उन्हें देखकर सब लोग डर जाएँगे। ६५ उनकी प्रकृति अत्यन्त क्रूर होगी। वह सभी जीव-जन्तुओं का आहार करेंगे। ६६ देवताओं को अपनी चरण-सेवा में लगाएँगे। अपनी भुजाओं

देवता मानंकु पाद तळे खटाइबे ।
बाहुबळे से चउद भुवन साधिबे ॥ ६७ ॥
बिना रथे शुन्यमार्गे करिबे से गति ।
न करिबे तिनिपुरे से काहाकु भीति ॥ ६८ ॥
एमन्त कहि सेठारु गले ऋषिगणे ।
शिराळजंघ दुहिता छाड़ि पशि बणे ॥ ६९ ॥
मृग मारिबाकु गला आहार निमन्ते ।
दुहिता गोटिए दशा होइला एमन्ते ॥ ७० ॥
काहुँ से जाणइ एहि समाचार जाक ।
मृग मारि भार कार आसइ निःशंक ॥ ७१ ॥
दुहिताकु बाटे भेटि आनन्द होइला ।
मृगभारकु ताहार आगे थोइ देला ॥ ७२ ॥
बाप झिअ दुहेँ बसि संतोषे भक्षिले ।
सेठारु शुण बणे बणे चाळिगले ॥ ७३ ॥
सउनन्द नामे अछि एकइ मुषळ ।
ताहाकु घेनि जाउछि सेहि महाबळ ॥ ७४ ॥
दुहिता गोटि ताहार संगे अछि एका ।
अरण्य मध्ये जाउछि असुर निःशंका ॥ ७५ ॥
बाटे देखिला आसइ दुर्गम असुर ।
बड़ प्रतापी अटइ दिशइ सुन्दर ॥ ७६ ॥

के बल से चौदह भुवनों को परास्त करेंगे । ६७ बिना रथ के ही आकाश-मार्ग में गमन करेंगे । तीनों लोकों में वह किसी से नहीं डरेंगे । ६८ इस प्रकार कहकर ऋषिगण वहाँ से चले गये । शिरालजघ पुत्री को छोड़कर भोजन के हेतु मृग मारने के लिए जंगल में गया हुआ था । इधर उसकी एकमात्र पुत्री की यह दशा हो गयी । ६९-७० उसे यह सब खबर कहाँ ? वह मृग मारकर उसे लादकर शंकारहित चला आ रहा था । ७१ मार्ग में पुत्री से मिलकर प्रसन्न हो गया । उसने मृग-भार को पुत्री के समक्ष रख दिया । ७२ बाप और बेटी दोनों ने संतुष्ट होकर भोजन किया तथा उस स्थान से निर्जन जंगलों में होते हुए चले गये । ७३ सौनन्द नाम का एक मूषल था, जिसे लेकर वह महान बलशाली चल रहा था । ७४ उसकी एकमात्र कन्या उसके साथ थी । असुर वनों के बीच से निःशंक होकर चला जा रहा था । ७५ उसने मार्ग में आते हुए दुर्गमासुर को

एकाके से दिगबिजे करि जाउअछि ।
बाटे भेटिला ताहाकु घोर दैत्य बत्सि ॥ ७७ ॥
बोइला केणिकि तुहि जाउछु निर्भये ।
जाणिलि तो पांजि पोछिनाणि जमराये ॥ ७८ ॥
न जाणु कि मोर नाम दुर्गम असुर ।
एहि क्षणि पठाइबि तोते जमपुर ॥ ७९ ॥
तिनिपुर जय कलि मुहिँ एकेश्वरे ।
तुहि अस्त्र धारी होइ जाउ निर्भयरे ॥ ८० ॥
एमन्त शुणि शिराळजंघ कला कोप ।
दान्ते दान्त चापि छिड़ा हेला कउणप ॥ ८१ ॥
तराटि चाहिँला ताकु आखि करि रंग ।
सउनन्द मुषळकु बुलाइण आग ॥ ८२ ॥
पिटिला दुर्गम दैत्य उपरे निठाइ ।
मुषळ न बाजु ताहा नेला से छड़ाइ ॥ ८३ ॥
उलटि पिटिला नेइ दानबर शिरे ।
पड़िला शिराळजंघ भुमिर उपरे ॥ ८४ ॥
गरजन करि तहिँ मला बीरमणि ।
दुहिता गोटि ताहार लुचिथिला पुणि ॥ ८५ ॥

देखा, जो बड़ा प्रतापी और देखने में सुन्दर था । ७६ इस समय वह दिग्विजय करता हुआ चला जा रहा था । मार्ग में उसकी भेंट घोर दैत्य के पुत्र से हो गयी । ७७ दुर्गम बोला, अरे ! तू निर्भय होकर कहाँ जा रहा है ? मुझे ज्ञात हो गया कि तुम्हारी जन्मपत्री यमराज ने पोंछ डाली है । ७८ क्या तू नहीं जानता कि मेरा नाम दुर्गमासुर है ? तुझे इसी क्षण मैं यमलोक को भेज दूंगा । ७९ मैंने अकेले ही तीनों लोकों को जीत लिया है और तू अस्त्र धारण कर निर्भीक चला जा रहा है । ८० ऐसा सुनकर शिरालजंघ कुपित हो गया । दाँत पीसकर वह दैत्य खड़ा हो गया । ८१ उसने आँखें लाल करके उसे घूरकर देखा तथा सौनन्द मूषल को आगे घुमाया । ८२ उसने घात लगाकर उसे दुर्गम दैत्य पर पटक दिया । लगने के पहले ही दुर्गम ने उसे छीन लिया । ८३ उलटकर उसने उससे दानव के शिर पर प्रहार किया । शिरालजंघ पृथ्वी पर गिर पड़ा । ८४ वह बीरमणि गर्जना करते हुए वहीं मर गया । उसकी पुत्री छिपी हुई थी । ८५ पिता को मृत देखकर वह दौड़कर आ गयी ।

पितार मरिबा देखि अइला से धाइँ।
बहुत शोक कला ता गुणमान कहि ॥ ८६ ॥
सुन्दरीर रूप देखि दुर्गम असुर।
बोइला ए बीर गोटि हुए कि तोहर ॥ ८७ ॥
काहार दुहिता तुहि काहार रमणी।
बिभा नोहिथिबा प्राय दिशु अछि पुणि ॥ ८८ ॥
एमन्त शुणि सुन्दरी बोइला हे बीर।
एहि दानब अटइ मोहर पिअर ॥ ८९ ॥
शिराळजंघ एहार नाम जे अटइ।
मदनकला वेश्यार गर्भु जात मुहिँ ॥ ९० ॥
मोर नाम रत्नगर्भा जाण बीर मणि।
मोते छाड़ि स्वर्गे गला मोहर जननी ॥ ९१ ॥
जनम काळु ए मोते पालिछि जतने।
एहि पिता मोते घेनि बुलुथाइ बने ॥ ९२ ॥
जोग्य बर पाइले जे बिभा देब मोते।
एबेत एठारे आसि मला तुम्भ हस्ते ॥ ९३ ॥
एमन्त शुणि दुर्गम असुर बोइला।
जाणिलि बिधाता तोते मोते भेटाइला ॥ ९४ ॥
मुहिँ बिभा होइ नाहिँ तुहि अभिआड़ी।
एबे तु सुन्दरी मोते भज शोक छाड़ि ॥ ९५ ॥

उसने उसकी कीर्ति का बखान करते हुए बहुत शोक किया। ८६ उस सुन्दरी का रूप देखकर दुर्गमासुर बोला कि यह वीर तुम्हारा कौन है? ८७ तुम किसकी पुत्री और किसकी भार्या हो? वैसे तो तुम क्वाँरी-सी दिख रही हो। ८८ इस प्रकार सुनकर सुन्दरी बोली, हे वीर! यह दानव मेरा पिता है। ८९ इसका नाम शिराळजंघ है। मदनकला वेश्या के गर्भ से मैं उत्पन्न हुई थी। ९० हे वीरमणि! मेरा नाम रत्नगर्भा है। मुझे त्यागकर मेरी माँ स्वर्ग चली गयी। ९१ जन्म के समय से ही इन्होंने मुझे पाला है। यही पिता मुझे लेकर जंगलों में घूमता था। ९२ योग्य वर प्राप्त होने पर मेरा विवाह कर देता। अब तो यहाँ आकर यह आपके हाथों से मारे गये। ९३ इस प्रकार सुनकर दुर्गमासुर ने कहा कि मुझे ज्ञात हो गया कि दैव ने तुझे मुझसे मिलवा दिया। ९४ मेरा भी विवाह नहीं हुआ है। तू भी क्वाँरी है। हे सुन्दरी! अब तू शोक का त्याग

एमन्त शुणि से बाळी बरिला सुचित्ते ।
माया करन्ते तक्षणे आसिलाक रथे ॥ ९६ ॥
तहिँरे बसाइ ताकु घेनि गला सेहि ।
असुर बिभा बिधिरे बेगे बिभा होइ ॥ ९७ ॥
एहि रत्नगर्भा गर्भु जन्मिला कुमर ।
जनमिबा मात्रे हेला तार बहुशिर ॥ ९८ ॥
तेणु जे ताहार नाम हेला बहुशिरा ।
दिनकु दिन बढ़िला चन्द्रकळा परा ॥ ९९ ॥
महा बळबन्त हेला ऋषिकर बरे ।
तिनिपुर जिणिला से निज प्रतापरे ॥ १०० ॥
समस्ते ताहार पादे पशिले शरण ।
भयरे केहि न कले तार संगे रण ॥ १०१ ॥
स्वर्ग मर्त्य तिनिपुर बुळिला से बीर ।
समस्ते शरण गले ताहार पयर ॥ १०२ ॥
मने बिचारिला मुहिँ रहिबइँ काहिँ ।
तिनिपुरे शत्रु होइ जणे केहि नाहिँ ॥ १०३ ॥
केमन्ते काहाकु देबि मुँ बाहार करि ।
उप्रोध ताहांकठारे तुटिब किपरि ॥ १०४ ॥

करके मेरी सेवा कर । ९५ ऐसा सुनकर उस बालिका ने प्रसन्न चित्त से उसका वरण कर लिया । माया कर देने से उसी क्षण वहाँ एक रथ आ गया । ९६ उसी पर उसको बिठाकर वह ले गया और असुर विधि के अनुसार दुर्गम ने उससे विवाह कर लिया । ९७ इसी रत्नगर्भा के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके जन्म ग्रहण करते ही उसके बहुत से शिर हो गये । ९८ इसी से उसका नाम बहुशिरा पड़ा । वह चन्द्रमा की कला की भाँति दिन-दिन बढ़ने लगा । ९९ ऋषियों के वर से वह महान बलशाली हो गया । उसने अपने प्रताप से तीनों लोकों को जीत लिया । १०० सभी ने उसके चरणों की शरण ग्रहण की । भय के कारण किसी ने उससे युद्ध नहीं किया । १०१ वह स्वर्ग, मृत्यु और पाताल तीनों लोकों में घूमता रहा । सभी उसके चरणों की शरण में आ गये । १०२ उसने मन में सोचा कि मैं रहूँगा कहाँ ? तीनों लोकों में कोई भी तो मेरा शत्रु नहीं निकला । १०३ मैं किसी को कैसे निकाल बाहर करूँ ? उनके प्रति साहाय्य की भावना कैसे टूटेगी ? १०४ मैं

समुद्र मध्ये बान्धिबि मुहिँ एक द्वीप ।
तहिँरे रहि होइबि निश्चे महानृप ।। १०५ ।।
एमन्त भाळि असुर बहिला पथर ।
पकाइ दिअइ नेइ सागर गर्भर ।। १०६ ।।
एमन्त सहस्र बर्ष प्रतापी दइत ।
समुद्र पोतिण देला पकाइ पर्वत ।। १०७ ।।
तार नाम बहुशिरा द्वीप हेला जाण ।
एथु अनन्तरे देवी पार्वती गो शुण ।। १०८ ।।
कल्पा असुर दुहिता नाम चन्द्रकळा ।
बहुशिराकु बरणमाळा देला बाळा ।। १०९ ।।
ताहाकु बिभा होइ से रहिला ता घरे ।
पति पत्नी दुहेँ तहिँ रहिले सुखरे ।। ११० ।।
दुहिंकर प्रीति क्षीर नीर ठारु बळि ।
क्षणे ता पशु अन्तर नुहेँ महाबळी ।। १११ ।।
राजा हेबा कथा जाक सबु पासोरिला ।
घर करिबा निमन्ते सिन्धु पोतिथिला ।। ११२ ।।
सबु पासोरि ता संगे बढ़ाइला प्रीति ।
एमन्त केतेक बर्ष गला एहि मति ।। ११३ ।।

समुद्र के बीच एक द्वीप बनाऊँगा। वहीं रहकर निश्चित रूप से मैं राजोचित महान कार्य करता रहूँगा। १०५ इस प्रकार सोचकर असुर ने पत्थर ढोना प्रारम्भ किया। उन्हें लेकर समुद्र के गर्भ में डालने लगा। १०६ इस प्रकार एक हजार वर्षों में उस प्रतापी दैत्य ने पर्वतों को फेंककर समुद्र को भर दिया। १०७ उस द्वीप का नाम बहुशिरा-द्वीप पड़ा। हे पार्वती ! सुनो। इसके पश्चात् कल्पासुर की पुत्री जिसका नाम चन्द्रकला था, उसने बहुशिरा को वरमाला समर्पित कर दी। १०८-१०९ उससे विवाह करके वह उसी के घर में रह गया। पति-पत्नी दोनों सुखपूर्वक रहने लगे। ११० दोनों का स्नेह नीर और क्षीर से भी अधिक था। जिस प्रकार मिलते ही दोनों एक हो जाते हैं उसी प्रकार वह दोनों अभिन्न हो गये। १११ वह महान बलवान राजा बनेगा। उसने घर बनवाने के लिए समुद्र को भी पाट डाला है। वह सब कुछ भूल गया। ११२ सब कुछ विस्मरण करके उसने चन्द्रकला के साथ प्यार में वृद्धि की। इस प्रकार कितने ही वर्ष बीत गये। ११३

जाहार आयुष जेते दिने थाए पूरि ।
ततक्षणे जम ताकु निए बान्धि करि ॥ ११४ ॥
केहि रखि न पारिबे ताकु आउक्षणे ।
बिधाता धाउड़ि जेणे निए ताकु तेणे ॥ ११५ ॥
दिने से पाताळु जाइ मरते मिळिला ।
बिन्ध्य परबते जाइँ प्रबेश होइला ॥ ११६ ॥
हइहय बंशी एक नरपति तहिँ ।
मृगया निमन्ते गिरि मध्ये थिला रहि ॥ ११७ ॥
तार नाम महासेना अटे महाबीर ।
भेटिला ताहाकु तहिँ प्रतापी असुर ॥ ११८ ॥
आमिष गन्ध पाइण होइ उनमत्त ।
धाइँ आसन्ते पाखकु देखि नरनाथ ॥ ११९ ॥
भये पळाइला ताकु बुद्धि न दिशिला ।
मन मध्ये महासेन एमन्त भाबिला ॥ १२० ॥
एमन्त अद्भुत रूप देखि नाहिँ काहिँ ।
भूत प्रेत पिशाच कि निशाचर एहि ॥ १२१ ॥
कि करिबि केणे जिबि आसुअछि धाइँ ।
धइले निश्चय मोते जिब एहि खाइ ॥ १२२ ॥

जिसकी आयु जब पूर्ण हो जाती है, तब यमराज आकर उसी क्षण उसे बाँध ले जाता है। ११४ उसे एक क्षण के लिए भी फिर कोई बचा नहीं सकता। दैव ने जैसा बिधान बना दिया होता है, उसे उसी प्रकार ले लेता है। ११५ एक दिन बहुशिरा पाताल से निकलकर मृत्युलोक में पहुँचकर विन्ध्याचल पर्वत पर प्रविष्ट हुआ। ११६ उस पर्वत पर हैहय-वंशी एक नरपाल अहेर के लिए उपस्थित था। ११७ उस महान पराक्रमी का नाम महासेन था। उसकी भेंट वहीं पर प्रतापी दैत्य से हो गयी। ११८ आमिष-गन्ध पाकर मतवाले हुए दौड़कर निकट ही आते हुए असुर को राजा ने देखा। ११९ भयभीत होकर वह भाग खड़ा हुआ। उसे कुछ उपाय ही दृष्टि में नहीं आ रहा था। वन में महासेन इस प्रकार विचार करने लगा। १२० मैंने इस प्रकार का अद्भुत रूप कहीं नहीं देखा है। पता नहीं यह भूत है या प्रेत अथवा यह निशाचर है। १२१ क्या करूँ, कहाँ जाऊँ? यह तो दौड़ा चला आ रहा है। पकड़ने से यह निश्चत रूप से मुझे खा जाएगा। १२२ इस प्रकार सोचकर राजा भय से

एमन्त भाळि नृपति पलाइले डरे ।
केश बास असम्हाळ होइ तरतरे ॥ १२३ ॥
पच्छकु चाहिँ दिअइ आसइ असुर ।
अछि तहिँ कउशिकि देबीर मन्दिर ॥ १२४ ॥
इन्द्र से देबींकि पूर्वे थापिथिले तहिँ ।
प्रतिदिन पुजन्ति से धूप दीप देइ ॥ १२५ ॥
भये से नृपति देबी मन्दिरे पशिला ।
रख मा बोलि चरणे शरण मागिला ॥ १२६ ॥
देबींक चरण दुइ धरि नरपति ।
पड़िअछि ज्ञान नाहिँ पाइ महाभीति ॥ १२७ ॥
तिन्ति जाइछि सर्वांग जाक तार झाळे ।
मन चइतन अछि देबी पाद तळे ॥ १२८ ॥
एमन्त बेळे भिळिला बहुशिरा तहिँ ।
मन्दिर भांगि दानब पशन्ते झसाइ ॥ १२९ ॥
शरण रक्षणी सेहि जगत जननी ।
नृपति निमन्ते हस्ते खड़गकु घेनि ॥ १३० ॥
असुर पच्छरे आसि भिळिले तुरिते ।
झमकाइ प्रहारिले देबी कोपचित्ते ॥ १३१ ॥

वेगपूर्वक भाग खड़ा हुआ। उसके केश तथा वस्त्र अस्त-व्यस्त हो रहे थे। १२३ वह पीछे मुड़कर आते हुए असुर को देख लेता था। वहीं पर कौशिकी देवी का एक मन्दिर था। १२४ प्राचीन काल में इन्द्र ने उस देवी की स्थापना की थी। वह नित्यप्रति धूप-दीप समर्पित करके उनकी पूजा करता था। १२५ भय के कारण वह राजा देवी के मन्दिर में जा घुसा। हे माता! रक्षा करो। ऐसा कहकर चरणों में शरण की कामना करने लगा। १२६ बड़े भय के कारण चेतनाहीन हो जाने पर राजा देवी के दोनों चरणों को पकड़कर गिर पड़ा। १२७ पसीने से उसका सारा शरीर तर हो गया था। देवी के चरणों में उसका मन चैतन्य था। १२८ इसी समय मंदिर तोड़कर दानव बहुशिरा झपटकर वहाँ जा घुसा। १२९ शरणागत की रक्षा करनेवाली वह जगन्माता राजा के लिए हाथों में खड्ग लेकर असुर के पीछे तुरन्त आ पहुँची तथा क्रोध से पूरित चित्त से उसने हुमककर प्रहार किया। १३०-१३१ एक ही झटके

एक घान्तिके असुर शिर जाक छिड़ि ।
पड़िला जेसने गिरि शृंग पड़े झड़ि ।। १३२ ।।
दानवकु निपातिण पशिले मन्दिरे ।
अज्ञान होइ पड़िछि नृपति तहिँरे ।। १३३ ।।
आउँसि देले ताहाकु पाइला से ज्ञान ।
उठि चाहिंला पच्छकु भयरे राजन ।। १३४ ।।
देखिला असुर मरि पड़ि अछि तहिँ ।
कन्धरु रुधिर तार जाउ अछि बहि ।। १३५ ।।
पर्वत परे पर्वत थिला प्राय दिशे ।
हरषे नृपति तार निकटकु आसे ।। १३६ ।।
देखि से अद्भुत रूप होइ आचम्भित ।
देबीकि बहुत स्तुति करि नृपनाथ ।। १३७ ।।
आपणा पुरकु गला आनन्दे राजन ।
देबी पादे चक्रधर मागइ शरण ।। १३८ ।।

लक्षशिरा जन्म ओ बिलंका द्वीप निर्माण

एथु अनन्तरे शुण हेमवन्त जेमा ।
गर्भवती होइथिला असुरर बामा ।। १ ।।

में असुर के सारे के सारे शिर कटकर जा गिरे जिस प्रकार से पर्वत के शिखर टूटकर गिरते हैं। १३२ दानव का संहार करके वह मन्दिर में प्रविष्ट हुई जहाँ पर राजा अचेत होकर पड़ा था। १३३ हाथ फेरने पर राजा की चेतना लौट आई। राजा ने उठकर भयभीत होकर पीछे की ओर देखा। १३४ उसने देखा कि वहाँ पर असुर मरा पड़ा है। उसके गले से रक्त की धार प्रवाहित हो रही है। १३५ ऐसा प्रतीत होता था कि मानों पर्वत के ऊपर दूसरा पर्वत पड़ा हो। प्रसन्न होकर राजा उसके समीप आ गया। १३६ विलक्षण रूप देखकर आश्चर्यचकित होकर नरनाथ ने देवी की बहुत स्तुति की। १३७ राजा सानन्द अपने नगर को चला गया। चक्रधर देवी के चरणों में शरण की याचना करता है। १३८

लक्षशिरा का जन्म तथा बिलंका द्वीप-निर्माण

हे हिमवन्तकुमारी ! इसके पश्चात् सुनो। उस असुर की पत्नी गर्भवती थी। १ दानव उसे कष्ट दे गया था। वह कह गया था कि

कष्ट देइ जाइथिला दानव ताहाकु ।
फेरि आसिबि मुँ कालि तोहर पाशकु ।। २ ।।
न आसिला जहुँ कष्ट गड़िगला तार ।
चन्द्रकळा कहे तार पितार आगर ।। ३ ।।
कळपा असुर गला जु आइँकि खोजि ।
एकइ दुहिता स्नेह थिबारु से भज्जि ।। ४ ।।
आयुध धरि पाताळ बिबरे से गला ।
नदी बन गिरि गुहा बहुत खोजिला ।। ५ ।।
काहिँ न पाइ सेठारु गला से असुर ।
बिन्ध्य बन खोजि उठे पर्बत शिखर ।। ६ ।।
गृद्ध पक्षी उड़ुछन्ति देखे खण्डे दूरे ।
उदबेगे जाउछन्ति शृगाळ कुकुरे ।। ७ ।।
एमन्त देखि असुर गला से ठाबकु ।
देखिला तहिँ पडिछि जुआइँ शबकु ।। ८ ।।
बहुत रोदन करि अइला से फेरि ।
दुहिता आगे कहिला सकळ बिस्तारि ।। ९ ।।
शुणि चन्द्रकळा शोके हेला हतज्ञान ।
प्राण हराइबा पाइँ बळाइला मन ।। १० ।।
पिता ताहाकु कहिला बहुत बुझाइ ।
गर्भकु नष्ट केमन्ते करिबु लो तुहि ।। ११ ।।

कल मैं तेरे पास वापस आ जाऊँगा । २ जब वह नहीं आया तो उसका कष्ट बढ़ गया । चन्द्रकला ने अपने पिता के आगे जाकर कहा । ३ कल्पासुर दामाद को खोजने निकल पड़ा । वह अपनी एक मात्र पुत्री के स्नेह से आर्द्र हो गया था । ४ आयुध लेकर वह पाताल-बिवर से निकलकर सरिता, जंगलों, पहाड़ों और गुफाओं में बहुत खोजने लगा । ५ वहाँ कहीं न पाकर वह असुर वहाँ से चलकर खोजते हुए विन्ध्यपर्वत के ऊपर चढ़ा । ६ थोड़ी दूर पर उसने गीध पक्षियों को उड़ते देखा । कुत्ते और सियार भी उद्वेग से जा रहे थे । ७ यह देखकर असुर उस स्थान पर गया तथा वहाँ पर उसने पड़े हुए दामाद के मृत शरीर को देखा । ८ अनेक रुदन करके वह वापस लौट आया तथा विस्तार-सहित सब कुछ उसने अपनी पुत्री से बता दिया । ९ यह सुनकर चन्द्रकला चेतनाशून्य हो गयी । उसकी इच्छा आत्मोत्सर्ग करने की हो गयी । १० बहुत कुछ

आत्मघातिनी होइ तु पड़िबु नरके।
आम्भे मज्जिबु केवळ सिना तोर शोके ॥ १२ ॥
मोर बोल मानि तु लो रह दिना केते।
पिता बचने से बाळो रहिला निश्चिन्ते ॥ १३ ॥
दशमास अन्ते जात कला एक पुत्र।
तळे पड़िबा मात्रके होइला बिचित्र ॥ १४ ॥
अकस्माते लक्षगोटा शिर हेला तार।
दुइलक्ष गोटा हेला पुणि तार कर ॥ १५ ॥
देखि आश्चर्ज होइले असुर असुरी।
बोइले बाप पराय स्वरूप एहारि ॥ १६ ॥
नाड़ी छेदन करि से पुत्रकु पाळिले।
लक्षेशिरा बोलि नाम तार कर्णे देले ॥ १७ ॥
एक मुखरे बाळुत करे क्षीर पान।
दिनकु दिन बढ़इ जेन्हे शुक्ळ जन्हु ॥ १८ ॥
तेसन बढ़िला सेहि चन्द्रकळा पुअ।
बाळखिल्या बरे सेहि हेला महाकाय ॥ १९ ॥
बेळु बेळ बळवन्त होइला दइत।
गोरु महँषि छागळ खाइला बहुत ॥ २० ॥

समझाते हुए पिता ने उससे कहा कि तू गर्भ को किस प्रकार नष्ट करेगी। ११ तू आत्महन्ता बनकर नर्क को प्राप्त होगी और हम लोग केवल तुम्हारे शोक में डूब जायेंगे। १२ मेरा कहना मानकर तू कुछ दिन रह जा। पिता के वचनों को मानकर वह कामिनी निश्चिन्त भाव से रहने लगी। १३ दश माह के पश्चात् उसने एक पुत्र को जन्म दिया। पृथ्वी पर गिरने मात्र पर ही विचित्र घटना घटी। १४ अकस्मात् ही उसके एक लाख शिर तथा दो लाख भुजाएँ हो गयीं। १५ असुर-असुरी यह देखकर चकित रह गये। वह कहने लगे कि पिता की ही भाँति इसका भी स्वरूप है। १६ नाड़ा छेदकर उन्होंने पुत्र का लालन-पालन किया तथा उसके कान में लक्षशिरा कहकर उसका नामकर्ण कर दिया। १७ वह बालक एक मुख से ही दुग्धपान करता था और जैसे शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है। १८ उसी प्रकार वह चन्द्रकला का पुत्र बढ़ने लगा। बालखिल्य ऋषियों के वर से वह विशालकाय हो गया। १९ धीरे-धीरे वह दैत्य बलवान हो गया। गाय-भैंस-बकरे उसने बहुत से खा डाले। २०

काहाकु न डरिला से बळबन्त पणे ।
मातार मुखकु चाहिँ बोइला से दिने ।। २१ ।।
आम्भर कि घर द्वार नाहिँ गो जननी ।
पुत्रर बचन शुणि असुर नन्दिनी ।। २२ ।।
बोलइ तात तोहर थिला बळबन्त ।
सिन्धु पोतिला मुण्डरे बहिण पर्बत ।। २३ ।।
घर करि आसिथिबा बेळे ताकु बाप ।
अकाळ मृत्यु घटिला न देखिलि रूप ।। २४ ।।
कि कहिबि बाबुरे मो कपाळर कथा ।
बिन्ध्य पर्बतरे मला तोहर जे पिता ।। २५ ।।
केमन्ते मला ता आम्भे न पारिलु जाणि ।
पिता घरेथिलि मुहिँ अनाथ तरुणी ।। २६ ।।
तोते आशा करि बाबु रखिलि ए प्राण ।
तुहि सिना करिबु ए पिण्डकु कारण ।। २७ ।।
एमन्त शुणि मातार मुखु लक्षशिरा ।
कोपे बोइला जननी नुह तु अधिरा ।। २८ ।।
पितृ बइरी मोहर बिन्ध्य परबत ।
ताहाकु आग चूरिबि मारि बिघाघात ।। २९ ।।

वीरता में वह किसी से भय नहीं करता था। एक दिन वह माता के मुख की ओर ताककर बोला। २१ हे माता! क्या हम लोगों के घर-द्वार नहीं है। पुत्र के वचन को सुनकर असुर-पुत्री ने कहा कि तुम्हारा पिता बहुत बलवान था। उसने अपने शिर पर ढोकर पत्थरों के पहाड़ों से समुद्र को तोप दिया था। २२-२३ अरे वत्स! घर बसाने के समय ही उसकी अकाल मृत्यु हो गयी। मैं उसके रूप को भी नहीं देख सकी। २४ अरे बेटे! मैं अपने भाग्य की बात क्या कहूँ? तेरा पिता विन्ध्य पर्वत पर मृत्यु को प्राप्त हुआ। २५ वह कैसे मरा। इस विषय में हम कुछ भी नहीं जान पाए। मैं अनाथ तरुणी पिता के घर पर थी। २६ तुझ पर ही आशा करके मैंने अपने इन प्राणों को रखा है। तुम्हीं इस पिण्ड का कल्याण करोगे। २७ माता के मुख से इस प्रकार सुनकर लक्षशिरा कुपित होकर बोला, हे माँ! तुम अधीर मत हो। २८ विन्ध्य पर्वत ही मेरे पिता का शत्रु है। उसे मुक्के मारकर पहले चूर्ण कर दूंगा। २९ इस प्रकार कहकर वह दैत्य वहाँ से चला गया। वह

एमन्त कहि सेठारु गला से असुर।
पाताळ बिबर देइ होइला बाहार॥ ३० ॥
पादभरे दळ दळ करुअछि मही।
प्रतापानळे कि पृथ्वी पकाइब दहि॥ ३१ ॥
हस्तरे आयुध नाहिँ जाए शून्य हस्ते।
मिळिला जे बीरमणि बिन्ध्य परबते॥ ३२ ॥
बिन्ध्यकु बोइला आरे एड़े तोर दर्प।
केमन्ते मला तो शिरे कह मोर बाप॥ ३३ ॥
एहि क्षणि तो गरब करि देबि चूना।
बिन्ध्यगिरि शुणि मने करइ भावना॥ ३४ ॥
कि करिबि ए दानब मुरुख अटइ।
एहि क्षणि देब मोते समुद्रे पकाइ॥ ३५ ॥
कि बुद्धि करिबि एते भाळि गिरिबर।
कर दुइ जोड़ि बोले तु हो महाबीर॥ ३६ ॥
अकारणे मोते कोप करुछु किम्पाइँ।
तोहर बापकु मारि पारइ कि मुहिँ॥ ३७ ॥
महाबळ दानब से देबक बइरी।
केबण देबता आसि स्त्री रूप धरि॥ ३८ ॥

पाताल के बिवर से होकर बाहर निकला। ३० पदाघात से पृथ्वी कसमसा गयी। लगता था जैसे प्रताप की अग्नि से वह पृथ्वी को जला डालेगा। ३१ उसके हाथ में कोई अस्त्र नहीं था। वह खाली हाथ चला जा रहा था। वह वीरमणि विन्ध्य पर्वत पर जा पहुँचा। ३२ उसने विन्ध्य पर्वत से कहा कि तुम्हारा इतना घमण्ड हो गया। तेरे शिखर पर मेरा पिता कैसे मरा? यह सब बता। ३३ इसी क्षण तेरा घमण्ड चूर-चूर कर दूँगा। यह सुनकर विन्ध्य गिरि मन में विचार करने लगा। ३४ क्या करूँ? यह दानव तो मूर्ख है। इसी समय यह मुझे समुद्र में फेंक देगा। ३५ अब क्या उपाय करूँ? इस प्रकार सोचकर उसने दोनों हाथ जोड़कर कहा कि तुम तो महान पराक्रमी हो। ३६ अकारण ही मेरे ऊपर क्रोध क्यों कर रहे हो? क्या मैं आपके पिता का वध कर सकता हूँ? ३७ वह महान पराक्रमी दानव देवताओं का शत्रु था। कोई देवता स्त्री का रूप धारण करके आ गया। ३८

खड़गरे काटि पकाइला तार शिर।
अकारणे कोप मोते करु बीरबर ॥ ३९ ॥
बिन्ध्य गिरिर बिनय बाणी शुणि दैत्य।
बोइला तु खटुथिबु मोर पादे नित्य ॥ ४० ॥
जेतेक पर्वत अछि पृथिबि भितरे।
समस्त घेनि खटिबु मोहर पयरे ॥ ४१ ॥
डरे बिन्ध्यगिरि कहे खटुथिबु जाइँ।
मणि रत्न मुक्ता आदि पाणि द्रव्य देइ ॥ ४२ ॥
एमन्त कहि दानब बोइला हे गिरि।
देबताए सिना मोर पितार बइरी ॥ ४३ ॥
आजि स्वर्गपुर नेइ रखिबि पाताळे।
एमन्त कहि दानब शून्यपुरे चळे ॥ ४४ ॥
दूत जणाइला जाइँ इन्द्रर छामुरे।
कहुँ असुरे आसइ आम्भ स्वर्गपुरे ॥ ४५ ॥
पर्बत पराय तार काय गोटि दिशे।
हस्तरे आयुध नाहिँ एका केन्हे आसे ॥ ४६ ॥
प्रळय अनळ जिणि तेज बिराजइ।
बिचारिण कार्ज कर आहे सुरराइँ ॥ ४७ ॥

उसने तलवार से उसका शिर काट गिराया। हे वीरश्रेष्ठ! अकारण ही आप मुझ पर कुपित हो रहे हैं। ३९ विन्ध्य पर्वत की विनययुक्त वाणी को सुनकर दैत्य ने कहा, तू नित्य मेरे पैरों की सेवा करता रहेगा। ४० पृथ्वी में जितने भी पर्वत हैं, उन सबको लेकर हमारे चरणों की सेवा करते रहना। ४१ भयभीत होकर विन्ध्य गिरि ने कहा कि मैं मणि-मुक्ता-रत्न आदि पदार्थों को देकर सेवा करता रहूँगा। ४२ इस प्रकार कहते हुए दानव ने फिर कहा, हे गिरि, देवता ही मेरे पिता के शत्रु हैं। ४३ आज स्वर्गपुर को लेकर पाताल में रख दूँगा। इतना कहकर दानव स्वर्ग की ओर चल पड़ा। ४४ दूत ने जाकर इन्द्र के समक्ष निवेदन किया, अपने स्वर्गलोक में कोई असुर आ रहा है। ४५ उसका शरीर पर्वत के समान दिखायी दे रहा है। हाथ में कोई शस्त्र नहीं है और वह अकेला कहीं से आ रहा है। ४६ प्रलयाग्नि को विजित करनेवाला तेज शोभा पा रहा है। हे देवराज! आप विचारपूर्वक कार्य करें। ४७

दूत मुखरु एमन्त शुणि सुनासीर ।
सुर्जंकु चाहिँ बोइले असुरकु घेर ॥ ४८ ॥
सहस्र किरण देइ पोड़ि पका बाटे ।
सइन्द्र बचने तपन देबता मुराटे ॥ ४९ ॥
सहस्र किरण धारी होइले तक्षणे ।
पांथिले दैत्यकु पोड़ि देबइँ किरणे ॥ ५० ॥
एमन्त भाळि किरण जाक देले ढाळि ।
किछि नोहिला दानब ताप तहुँ बळि ॥ ५१ ॥
सुर्जे किरणे ताहार न हेबारु किछि ।
मेघाकु राइ बोलइ कश्यपर बत्सि ॥ ५२ ॥
चारि मेघ एक होइ ढाळिदिअ जळ ।
स्वर्गे आसि न पारिब जेमन्ते चण्डाल ॥ ५३ ॥
इन्द्र आज्ञारे जे चारि मेघ हेले एक ।
द्रोण पुष्कर आबर्त्त मेघ सम्बर्त्तक ॥ ५४ ॥
घोर अन्धकार करि घोटिले गगन ।
बिजुळि जे घड़ घड़ मारि घन घन ॥ ५५ ॥
मुषळ धारा प्रमाणे बरषिले बारि ।
पड़इ से लक्षशिरा असुर उपरि ॥ ५६ ॥

दूत के मुख से इस प्रकार सुनकर देवराज इन्द्र ने सूर्य को ताककर कहा कि असुर को घेर लो । ४८ उसे मार्ग में ही सहस्र किरणों को छोड़कर जला डालो । इन्द्र की आज्ञा पाकर सूर्यदेव शीघ्र ही सहस्रकिरणधारी बन गये । उन्होंने विचार किया कि दैत्य को अपनी किरणों से जला डालूंगा । ४९-५० इस प्रकार सोचकर उन्होंने सारी किरणें छोड़ दी । परन्तु कुछ भी नहीं हुआ । दानव का ताप उससे कहीं अधिक बलवान पड़ा । ५१ सूर्य-किरणों से उसका कुछ न होने पर कश्यप के पुत्र ने मेघों को बुलाकर कहा । ५२ चारों ओर बादल इकट्ठा कर पानी बरसा दो, जिससे यह चाण्डाल स्वर्ग में न आ सके । ५३ इन्द्र की आज्ञानुसार चारों बादल— द्रोण, पुष्कर, आर्बत और सम्बर्त मेघ सब इकट्ठे हो गये । ५४ घनघोर अँधेरा करके उन्होंने आकाश को आच्छादित कर लिया । गरज के साथ बिजली भी कड़क रही थी । ५५ मूषल के समान पानी की धारा की वर्षा करने लगे । वह जल लक्षशिरा के ऊपर गिर रहा था । ५६ उसकी परवाह न करके पराक्रमी दानव आगे ही बढ़ता आ

न मानि असुर बीर हुए आगभर।
जेसने पर्बते गड़ि गड़ि पड़े नीर ॥ ५७ ॥
एमन्त देखि अग्नि कि बोइले बासब।
पोड़ि पका तु शून्यरे मरु से दानब ॥ ५८ ॥
एमन्त शुणि अनळ देबता तक्षणे।
प्रचण्ड मुरति धरि उठिले गगने ॥ ५९ ॥
लह लह जीभ करि बुलाइले कोपे।
लोहित बरन शिखा गगनकु व्यापे ॥ ६० ॥
असुर ता मध्ये पशि जाउअछि उठि।
अनळ शिखा ता देहजाक अछि घोंटि ॥ ६१ ॥
अग्निरे जहुँ से पोड़ि न मला असुर।
जमकु चाहिँ बोलइ देब पुरन्दर ॥ ६२ ॥
काळ बिकाळ आबर मृत्युकु जे पेश।
असुर प्राण घेनन्तु पाति काळपाश ॥ ६३ ॥
जम देबता तक्षणे से तिनिंकु राइ।
बोइला असुर प्राण बान्धिआण जाइँ ॥ ६४ ॥
काळ बिकाळ जे मृत्यु देबता ए तिनि।
धाइण गले हस्तरे काळपास घेनि ॥ ६५ ॥
बसाइले जत्न करि आकाश मार्गरे।
पाश छिण्डि खण्ड खण्ड हेला तार परे ॥ ६६ ॥

रहा था। लगता था जैसे पर्वत से पानी झर रहा हो। ५७ ऐसा देखकर इन्द्र ने अग्नि से कहा कि तुम उसे आकाश में ही जला दो जिससे वह दानव मर जाय। ५८ ऐसा सुनकर उसी क्षण अग्निदेव प्रचण्ड मूर्ति धारण करके आकाश में उठने लगे। ५९ क्रुद्ध होकर जीभ को लपलपाते हुए रक्तिम वर्ण की अनलशिखा आकाश में व्याप्त हो गयी। ६० दानव उसी के बीच से बढ़ता चला जा रहा था। अग्निशिखाओं से उसका शरीर घिरा हुआ था। ६१ जब अग्नि के जलाने पर भी उस दानव की मृत्यु नहीं हुई तब इन्द्र ने यमराज की ओर देखते हुए कहा। ६२ काल-बिकाल और मृत्यु को भेजो जो कालपाश चलाकर असुर के प्राण हरण कर लें। ६३ यमदेव ने उसी क्षण तीनों को बुलाकर कहा कि तुम लोग जाकर दानव के प्राण बाँध लाओ। ६४ काल-विकाल तथा मृत्यु नामक तीनों देवता हाथों में कालपाश लेकर दौड़ गये। ६५ गगनमार्ग में यत्न